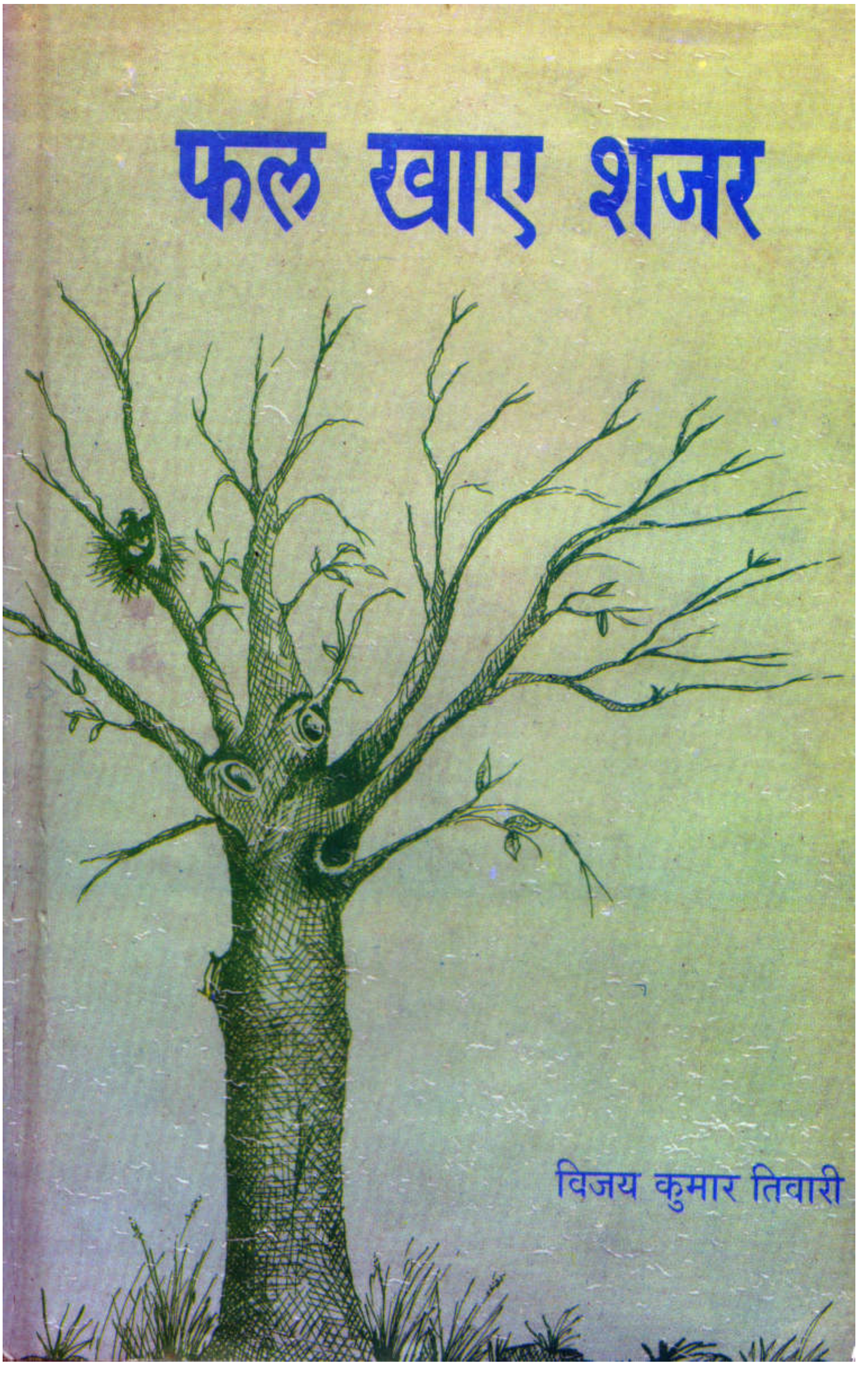
फल खाए शजर
विजय कुमार तिवारी

फल खाए शजर

(ग़ज़ल संग्रह)

(हिन्दी साहित्य अकादमी, गुजरात द्वारा पुरस्कृत)

विजय तिवारी

सेतु प्रकाशन

अहमदाबाद

फल खाए शजर

(ग़ज़ल संग्रह)

© लेखक

प्रथम संस्करण : 1999

द्वितीय संस्करण : 2017

मूल्य : 180 रूपये

प्रकाशक :

सेतु प्रकाशन

10, किल्लोलनगर सोसायटी

राजेन्द्र पार्क रोड,, ओढ़व,

अहमदाबाद-382415

मो. 94276 22862

Email : vijay.tiwari1998@gmail.com

isbn 978-93-6013-007-7

मुद्रक :

कुसुम प्रिन्टर्स,

1, शिवशक्ति कॉम्प्लेक्ष

विराटनगर, अहमदाबाद-382415

समर्पण....

मेरी ज़िन्दगी को
ख़ुशियों की ख़ुशबू से
महका देने वाली
मेरी प्यारी नन्ही
बिटिया
स्वाति
को

फल खाए शजर – एक दृष्टि

ग़ज़ल के इतिहास के बारे में बहुत कुछ लिखा जा चुका है कि वह किन - किन पड़ावों को तय करते हुये यहाँ तक पहुँची । इस सम्बन्ध में मैं इतना ही कहूँगा कि हमारे देश में ग़ज़ल उर्दू से निकल कर हिन्दी में आई । कालान्तर में हिन्दी साहित्य की अन्य विधाओं के समान ही ग़ज़ल का भी क्षेत्र – विस्तार हुआ । हिन्दी में आकर इसकी विषय-वस्तु का दायरा व्यापक हुआ । ग़ज़लगों कवियों का ध्यान देश, राजनीति, समाज एवं समाज में व्याप्त कुरीतियों की ओर भी गया । वैसे हिन्दी में ग़ज़ल पहले से ही कही जाती रही है । निराला, प्रसाद और बलबीर सिंह 'रंग' जैसे स्थापित कवियों ने भी ग़ज़लें कहीं । किन्तु दुष्यन्त के बाद हिन्दी ग़ज़ल की बाढ़-सी आ गई। वर्तमान दो दशकों को हिन्दी काव्य-जगत के इतिहास में ग़ज़ल युग कहा जाय तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। आजकल तो बहुधा कवि एवं कवियित्रियों ने गीत का आँचल छोड़ कर ग़ज़ल का दामन थाम लिया है । आज पत्र-पत्रिकाएँ ऐसी नहीं हैं जिसमें ग़ज़लें प्रकाशित नहीं होती हों । यदि देखा जाय तो लगभग सभी रचनाकारों ने ग़ज़लों में कुछ न कुछ योगदान दिया है । कुछ कवि ग़ज़ल के क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने में भी सफल हैं । इधर ग़ज़लगो कवियों ने ग़ज़ल पर आलेख भी लिखे तथा उसका विधान भी तराशने के सार्थक प्रयास किये । कुल मिला कर हिन्दी में ग़ज़ल ने अपने पैर जमा लिये हैं तथा वह हिन्दी काव्य में ऐसी घुल-मिल गई है कि अब ग़ज़ल को इससे अलग करना असम्भव नहीं तो मुश्किल जरूर है । मेरा तो यही मानना है कि यदि ग़ज़ल उर्दू की आबरू है तो हिन्दी की आरजू । शायद यही आरजू पूरी करने की नियत से श्री विजय तिवारी आपके सम्मुख 'फल खाए शजर' ग़ज़ल संग्रह रख रहे हैं ।

'विजय' तुम वो सुखनवर हो जो पत्थर दिल को पिघला दे,
तुम्हें सुनकर बड़ी राहत मिली हम ग़म के मारों को ।

श्री विजय तिवारी की गणना उन रचनाकारों में की जायेगी जिनकी शाइरी में मात्र निजी दुख-दर्द न होकर समाज के सुख-दुख, आम आदमी की पीड़ा का एहसास बड़े सलीके से प्रतिबिम्बित हुआ है –

बनता है महल जिसके हाथों से वही अक्सर,
आकाश तले जीवन करता है बसर देखो ।
इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो ।

इनकी वफा भावना एवं विचारों की बुनियाद पर टिकी हुई है । यह सही है कि जो जैसा होता है, वैसा ही दूसरों को समझता है –

वफ़ा चीज क्या है नहीं जानता जो,
वही कह रहा है 'विजय' बे-वफ़ा है ।

जहाँ पर इनकी ग़ज़लों में प्रेमानुभूती और व्यक्तिकता भावुकता में परिलक्षित हुई है, वहीं पर भाव-पद्धति को अंगीकार करते हुये देश, धर्म, राजनीति, सामाजिक विसंगतियों पर भी इनकी नज़र गई है। इन्होंने बड़ी साफ़गोई से बिना किसी भय एवं दबाव के अपने उद्‌गार व्यक्ति किये हैं –

हमारी साफ़गोई दोस्तों उनको न रास आई,
खरी कहदी भरी महफ़िल में तो झुंझला रहे हैं वो ।

राजनीति पर इशारों से बात कहने का फ़न कम लोग ही जानते हैं। मगर तिवारी जी इसमें महारत रखते हैं।

रौशनी होगी सफर में इसलिए दी थी मशाल,
यह नहीं मालूम था वह घर जलाने आयेगा ।

जब समाज की दुर्दशा देखते हैं तो उसको बड़ी शायसतगी के साथ चेतावनी देने से नहीं चूकते –

हर मोड़ पर ही ठोकरें खाई हैं आपने,
फिर भी जनाब आँख अभी तक खुली नहीं ।
पतन की भयानक है खाई जहाँ पर,
डगर ये उसी मोड़ पर जा रही है ।

अपने दर्द के बयान में बड़ी नफसियाती (मनोवैज्ञानिक) बात कहते हुए नज़र आ रहे हैं। कितना दर्द इनके दिल में है, इसका अंदाज़ा एक भावुक मन ही कर सकता है–

हँसी के बाँध से सैलाबे-ग़म को रोकता तो हूँ,
मगर तन्हाई में ये बाँध अक्सर टूट जाता है ।

ख़िताबात और इनामात के वितरण पर कितना अच्छा व्यंग्य किया है मुल्हायजा फरमाइये –

न तो दिवंगत हूँ औ' न बूढ़ा,
पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे ?

एक सच्चे साहित्यकार में जो खुद्‌दारी और साहस होना चाहिए, उससे तिवारी जी भी अछूते नहीं हैं –

कलम छोड़ सकता नहीं वो कभी,
'विजय' का तू कर दे भले सर कलम ।

जलाले दीप निडर हो के यार तूफाँ में,
हुई कभी भी किसी रोशनी की हार नहीं ।

बीच भँवर में हीम्मत हमको,
जीवन जीना सिखलाती है ।

चिकना घड़ा आखिर चिकना घड़ा है, उस पर किसी बात का असर कहाँ –

यक़ीन हो ही गया आज तुझको समझाकर,
कभी ढ़लान पे पानी ठहर नहीं सकता ।

'रघुकुल रीति सदा चल आई – प्राण जाये पर वचन न जाई' के परिप्रेक्ष्य में तिवारी जी कहते हैं –

अभी जमीर मरा ही नहीं इसी कारण,
निभा रहा हूँ वचन मैं मुकर नहीं सकता ।

महानगरों की आपाधापी तथा पर्यावरण के एहसास को इनका संवेदीनशील मन सुबह-शाम महसूस करता है –

आज भौतिकवाद में औ इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक सुबह की ताजगी मिलती नहीं ।

इनका देश प्रेम देखना हो तो –

हमें है जान से प्यारा, ज़मीं का स्वर्ग ये अपना,
न देंगे हम किसी क़ीमत पे जीते जी चिनारों को ।

जहाँ इनमें वफ़ा, साहस, देश प्रेम, संवेदना, प्यार की अनुभूतियाँ हैं, वहीं विनम्रता का सागर है –

तान कर सीना अहम् का सबको ठुकराता अगर,
तो समन्दर से कभी कोई नदी मिलती नहीं ।

उक्त अश्आर इस बात को प्रमाणित करने के लिए काफी हैं कि श्री तिवारी जी ने 'फल खाए शजर' के रूप में एक ख़ूबसूरत तोहफ़ा पेश किया है । वर्तमान में अनेक ग़ज़लगो कवियों की कई अच्छी पुस्तकें भी प्रकाश में आई । इन रचनाकारों की कृतियों के बीच 'फल खाए शजर' भी अपनी रोशनी निश्चित बिखेरेगा । यह संग्रह भी अच्छी ग़ज़लों का सरमाया है । इसमें लगभग 69 ग़ज़लें संग्रहित हैं और सभी में ग़ज़ल की पारम्परिक मान्यताओं के साथ नयी विचारधारा एवं सोच मिलती है । श्री तिवारी ने अपनी ग़ज़लों में व्यापक परिवेश देने का प्रयत्न किया है । जिसमें उन्हें वांछित कामयाबी भी मिली है । इनकी ग़ज़लों में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनमें व्यक्त किया गया दर्द इनका अपना दर्द नहीं है । इन्होंने इस शेर को चरितार्थ कर दिया है कि –

खंजर चले किसी पे तड़पते हैं हम 'अमीर',
सारे जहाँ का दर्द हमारे जिगर में है ।

इस तरह इन्होंने लोक-भावना का प्रतिनिधित्व करने वाले एक श्रेष्ठ रचनाकार की भूमिका ब-ख़ूबी निभाई है । देश-भक्ति, दर्शन, समाज, भर्त्सना, भावना, भावुकता, साहस, आदमी का आदमी से व्यवहार, विरोधाभास, मानवता, पूजा, प्रेम, राजनीति और सामाजिक विसंगतियाँ जैसी ज्वलन्त समस्याओं को अपनी ग़ज़लों में सोच की

गहराई में जाकर उजागर किया है। इनकी भाषा विशुद्ध खड़ी बोली है तथा उर्दू और हिन्दी के शब्दों को बराबरी के साथ प्रयोग करने में कोई हिचक नहीं है। इनके बात कहने का अंदाज़ बड़ा बेबाक एवं असरदार है। श्री तिवारी वक्त के प्रति जागरूक हैं तथा इनकी कृति को देखकर सहसा मुझे अपनी यह पंक्तियाँ याद आ रही हैं :–

है तुम्हारी ग़ज़ल न हमारी ग़ज़ल,
सबको लगने लगी आज प्यारी ग़ज़ल ।
कहते होंगे कभी मीर ग़ालिब मगर,
आजकल कह रहे हैं तिवारी ग़ज़ल ।

अंसार कंबरी
जफ़र मंजिल, 11/116, मकबरा,
ग्वालटोली, कानपुर - 208001

• • •

टीस भरी अपील

जनाब विजय तिवारी की ग़ज़लें 'फल खाए शजर' नज़र में आई। अपने नाम के मुताबिक ये ग़ज़लें एक अलग किस्म की शायरी हैं। इस संग्रह की सभी ग़ज़लों का मिजाज यकसाँ नज़र नहीं आता है। यानी कि यह एक रंग-बिरंगे फूलों का गुलदस्ता है। कहीं पर कोई ग़ज़ल रूमानी खयालातों, हुस्न-इश्क के दरमिया बसर करती है, तो कहीं एक बेचैनी का एहसास भी कराती है जिनमें बदलते हुए समाज के बिखरते हुए मूल्यों के प्रति चिंता और नष्ट होती संवेदनाओं में से कुछ 'अच्छा' बचा लेने की एक टीस भरी अपील नज़र आती है। यानी तिवारी जी की ग़ज़लें रूमानी दायरे में कैद न रहकर आज की विडम्बनाओं, विसंगतियों और वेदनाओं से सीधी जुड़ी हुई हैं।

प्रस्तुत ग़ज़लों में हिन्दी कविता का प्रभाव व्यापक है। ग़ज़लों में शुद्ध हिन्दी एक अच्छा प्रयोग है। ग़ज़लों का शिल्प न केवल सधा हुआ है बल्कि उसका सराहनीय निर्वाह भी हुआ है। ये रचनाएँ तिवारी जी की दीर्घकालीन काव्य साधना की उपलब्धि हैं। मुझे पूरी आशा है कि इस काव्य संग्रह का हिन्दी जगत में भरपूर स्वागत होगा।

उषा राजे सक्सेना
उपाध्यक्ष, हिन्दी समिति, यू.के.
सह सम्पादिका - 'पुरवाई' लन्दन
54, हिल रोड, मिचम, लन्दन

• • •

प्रस्तवन

हिन्दी-कविता की सम-सामायिक विधाओं में ग़ज़ल प्रमुख है। राष्ट्रभारती के भक्तिकाल में ही इसके रचनाधर्म के दर्शन होते हैं, परन्तु वर्तमान में स्व. दुष्यन्त कुमार इस विधा के पुरोधा हैं। उनकी ग़ज़लों के प्रकाशन, प्रसार एवं प्रतिष्ठापन के बाद हिन्दी-काव्य में ग़ज़ल लेखकों की संख्या दिनानुदिन वृद्धि पा रही है। यद्यपि समकालीन ग़ज़ल-सृजन के परिमाण-बाहुल्य में सब का सब स्तरीय और उत्कृष्ट नहीं है। तथापि उसी में अनेक ग़ज़लकार ऐसे भी हैं, जिनसे वह हिन्दी में स्वतंत्र तथा अभीष्ट स्थान बना सकी है और काव्य-मर्मज्ञों में प्रतिष्ठित हुई है।

श्री विजय तिवारी भारत के धुर पश्चिमांचल अहमदाबाद के निष्ठावान हिन्दी-उपासक हैं। अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी काव्य-संकलन के ऐतिहासिक संपादन के अतिरिक्त वे ग़ज़ल भी कहने में माहिर हैं सन् 1991 ई. में उनका पहला ग़ज़ल-संग्रह 'निर्झर' प्रकाशित और चर्चित हो चुका है। 'फल खाए शजर' उनका दूसरा ग़ज़ल-संग्रह है। आजकल हिन्दी की ग़ज़ल तीन भाषिक रूपों में रची जा रही है – ठेठ उर्दू में, संस्कृतनिष्ठ हिन्दी में तथा प्रचलित सार्वजनिक शब्दावली से समन्वित हिन्दुस्तानी में। तत्सम हिन्दी में सबसे कम और हिन्दुस्तानी में सर्वाधिक ग़ज़लें लिखी जा रही हैं। तिवारी जी की भी अधिकांश ग़ज़लें हिन्दुस्तानी में रचित हैं, जिनमें हिन्दी-उर्दू की गंगाजमुनी छवि मुखर है तथा कथ्य की सम्प्रेषणीयता एवं पारदर्शिता भी बलवती है।

माँ शारदा से तम को ज्योति में बदलने, कर्तव्य-बोध और आदर्शों पर अड़िग रहने के प्रार्थी विजय जी अपनी ग़ज़लों में 'लोभ, तृष्णा, छल, प्रपंचो से भरे युग' के यथार्थ बिम्ब तन्मयता से प्रस्तुत करते हैं। उनकी सृजनधर्मिता का आत्मविश्वास इसमें मुखर है –

आप क्या चीज हैं मैं गीत ग़ज़ल से अपने,
चाँद, सूरज ये सितारे भी नचा सकता हूँ।

हजारों दोस्त तथा बेशुमार ज़ख्म पाने वाले कवि ने बेनुगाहों के क़त्ल देखे हैं, और मुजरिम फरार। शेर की खाल ओढ़कर सियारों के राज को भी वह देख रहा है तथा फूल देकर भी ख़ार पाता है। दोस्तों की गद्दारी एवं बेवफाई उर्दू - शाइरी की एक 'काव्य-रूढी' है। बहुसंख्य शायरों ने इस विषय पर चोट करने वाले शेर कहे हैं। अत: विजय जी का यह शेर –

दोस्त हमने हजार पाये हैं,
ज़ख्म भी बेशुमार पाये हैं।

पढ़ते या सुनते ही ऐसे अनेक शेर याद आने लगते हैं। एक शायर ने कहा है–

चोट खा के जो देखा कमीगाह की तरफ,
अपने ही दोस्तों से मुलाकात हो गयी ।

बीते कल की आस्थाओं का स्वर था –

ब्रच्छ न फल भच्छन करै नदी न संचै नीर ।
परकारज के कारनै साधुन धरा शरीर ॥

जो कि कालिदास की इस मान्यता का लोक-स्वीकृत भावानुवाद है –

भवन्ति नम्राः तरवं फलोद्‌गन्नैः नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणः

परन्तु अतीत का वह उदात्त जीवन-मूल्य आज ऐसे अवमूल्यन को प्राप्त है कि कवि को कहना पड़ता है –

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो ।

ग़ज़लगो ने ऐसी ही युगीन विसंगतियों और कथनी-करनी के भेद को अनेक स्थलों पर प्रभावी ढंग से उजागर किया है । कुछ पक्तियाँ देखें –

जो कहते थे यहाँ हम दूध की नदीयाँ बहायेंगे,
ज़ामीं को बेख़ता के ख़ून से नहला रहे हैं वो ।

जो अभी पर्यावरण पर दे गया भाषण यहाँ,
देखना वो रात में जंगल कटाने आयेगा !

जो थे खिलाफ मय के वही कह रहे हैं अब,
जीवन तेरा फिजूल है 'गर तू ने पी नहीं ।

कबीर ने सदियों पहले कहा था –

दोस पराये देख के चले हसन्त हसन्त,
अपने कबौ न देख हीं, जिनके आदि न अन्त ।

श्री विजय ने इसी तथ्य को युगीन सन्दर्भ में यों कहा है –

सभी कह रहे हैं ज़ामाना बुरा है,
मगर कोई ख़ुद में नही झाँकता है ।

'प्रगतिशील' ग़ज़लों के अतिरिक्त इस संग्रह में कुछ ग़ज़लें प्रेम-शृंगार से भी सम्पृक्त हैं । इन्हें 'पारम्परिक' भी कह सकते हैं, क्योंकि ग़ज़ल का परम्पराबद्ध रूप प्रेम-शृंगार ही है । यथार्थ के मरुस्थल में तपने के बाद मानो कवि प्रणय की अमराइयों की छाँव में जाता है, जहाँ मृदु-सुकुमार भावनाएँ उसके घावों पर मरहम लगाती हैं । ऐसे कुछ शेर यहाँ दृष्टव्य हैं –

याद तुम्हारी ये लाती है,
रात न जाने क्यों आती है ?

शाम ढ़ले परछाई हमसे,
चुपके-चुपके बतियाती है ।
झील लगे जंगल में जैसे,
पायलिया-सी खनकाती है ।

कुछ मिलाकर तिवारी जी की ग़ज़लों में युगीन विरूपताएँ मुँह भर बोलती हैं, व्यंग्य-प्रहार करती हैं और कुछ सोचने-करने के भाव भी जगाती हैं । उनके उत्तरोत्तर साहित्यिक उत्कर्ष की कामना करता हुआ मैं उन्हीं के शब्दों में उनके ग़ज़ल-वैशिष्ट्य को रेखांकित कर विराम लेना चाहूँगा ।

'विजय' तुम वो सुखनवर हो जो पत्थर दिल को पिघला दे,
तुम्हें सुनकर बड़ी राहत मिली हम ग़म के मारों को ।

डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त'
सीनियर रीडर, हिन्दी विभाग,
केन ग्रोअर्स नेहरू पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज,
गोला, गोकर्णनाथ खीरी - 262802

• • •

दिलचस्प एवं रोचक ग़ज़लें

कहते हैं काव्य आत्म की अभिव्यक्ति होती है । अत: प्रस्तुत ग़ज़ल-संग्रह जहाँ पर दिलचस्प एवं रोचक है, वहीं इनमें जीवन का वास्तविक सत्य भी दृष्टिगोचर होता है । यथार्थ को स्वीकार कर नि:संदेह हम पाठकों को सही दिशा में प्रेरित करते हुए अपने व्यक्तिगत जीवन में लाभ प्राप्त करने में हम सफल होंगे, ऐसी हमें पूरी उम्मीद है । ग़ज़ल संग्रह का नामकरण भी बिलकुल सार्थक है । प्राचीन समय में जहाँ "नदियाँ न पीये कभी अपना जल, वृक्ष न खाए कभी अपना फल" कथन प्रचलीत रहे हैं तो आज के युग में दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हो रहा है । आज के नेता एवं मानव स्वार्थ और लोभ के कीचड़ में फँसे हुए हैं तथा "इदं न मम" की भावना लुप्त हो रही है ।

भाई विजय तिवारी को हमारी हार्दिक शुभकामनाएँ ।

डॉ. नेतराम शर्मा
वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी, फीजी सरकार, फीजी

• • •

स्वागत योग्य ग़ज़लें

श्री विजय तिवारी जी की ग़ज़लों से गुजरते हुए यह राय सहज ही बन जाती है कि श्री तिवारी हिन्दी ग़ज़ल के मर्यादित और मंजे हुए हस्ताक्षर हैं । ग़ज़ल के पारम्परिक शिल्प का सम्यक् निर्वहन करते हुए उन्होंने कुछ ग़ज़लें हिन्दी छन्दों में भी कही हैं । मतला, मक्ता और शेर की कहन के लिए जिस ग़ज़लात्मक सोच और अन्दाज़ की ज़रूरत है, उसे बख़ूबी इन ग़ज़लों में देखा जा सकता है ।

अपनी सामाजिक संलग्नता और प्रासंगिकता से जहाँ ये ग़ज़लें हमें जोड़ती हैं, वहीं ग़ज़लकार के वैयक्तिक अनुभवों से भी हमारा साक्षात् कराती हैं । मानवीय संवेदना के साथ युगीन सन्दर्भों की बिम्बात्मक और प्रतिकात्मक अभिव्यक्ति इन ग़ज़लों में है । इन ग़ज़लों का सबसे बेहतरीन पक्ष है व्यंग्यात्मकता । आज के विसंगत परिवेश में व्यंग्य जीवन और साहित्य का बेहद ज़रूरी हिस्सा बन गया है । राजनीति, समाज, धर्म, घर-परिवार, रिश्ते, दैनिक व्यवहार, सभी में जो विरूपताएँ फैली हुई हैं, उन्हें व्यंग्य के माध्यम से ही सशक्त अभिव्यक्ति दी जा सकती है । श्री विजय तिवारी का ग़ज़लकार अपने समय से जुड़कर सारी स्थितियों-परिस्थितियों को व्यंग्यात्मक लहजे में हमारे समक्ष रखता है । कुछ शेर आप भी देखें –

शेर की खाल ओढ़कर अक्सर,
राज करते सियार पाए हैं ।

नई दुल्हन की डोली को शहर की भीड़ में लूटा,
दिया हमने ही रहकर मौन ये साहस कहारों को ।

आ गया है वक्त वो बस्ती जलाने आएगा,
फिर वही दमकल लिए इसको बुझाने आएगा ।

लूट, चोरी, ख़ून खुलकर लोकशाही में करो,
शान से शासन तुम्हें सर पर बिठाने आयेगा ।

अपने समय के सत्यों से ये ग़ज़लें पूरी तरह बा-ख़बर हैं । केवल दो शेर ही इस दृष्टि से काफी होंगे –

आज भौतिकवाद में औ'इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक सुबह की ताज़गी मिलती नहीं ।

हर हाथ में खंज़र है सीनों में ज़हर देखो,
बहता है लहू हर सू अब चाहे जिधर देखो ।

व्यक्ति के अन्दर और बाहर आज जो संघर्ष चल रहा है उसकी अत्यन्त अन्तरंग और आत्मीय अभिव्यक्ति भी इन ग़ज़लों में हुई है । मसलन-

ये धागा प्रेम का जुड़ जाए इस कोशिश में हूँ लेकिन,
यहाँ से जोड़ता हूँ तो वहाँ से टूट जाता है ।

हर क़दम, हर पल वो मेरे साथ है,
फिर भी उसकी जुस्तजु होने लगी ।

इन ग़ज़लों में एक साथ जहाँ अवसाद-आह्लाद, आस्था-अनास्था, आशा-निराशा से संवलित अशआर आपको मिलेंगे तो प्रेम और सौन्दर्य के सिलसिले में कुछ नई उपमाओं और रूपकों से भरे हुए शेर भी। जहाँ तक प्रतीकात्मकता का सवाल है, कवि ने अपने नजदीक से ही ज्यादातर प्रकृति और रोजमर्रा की ज़िन्दगी में काम आने वाले प्रतीकों को ही लिया है किन्तु कहीं-कहीं पौराणिक प्रतीक जैसे सीता, गिरिधर, पाण्डव आदि को भी नए सन्दर्भों में ढालकर प्रस्तुत किया है, यद्यपि कवि के पास एक उर्वर सांस्कृतिक और भाषिक चेतना है, तो भी कहीं-कहीं कुछ खटकने वाली बातें भी हैं। जैसे –

तुम मेरी कब्र पर ऐ 'विजय',
सिर्फ़ काँटे चढ़ाया करो ।

यहाँ 'कब्र' का प्रयोग कवि की सांस्कृतिक चेतना को क्षरित करनेवाला है। इसी तरह 'किताबे-बदखुलूसी', 'साहिबे-फ़न', 'हुस्ने-लाजवाब', 'कोहे-ग़म' जैसी उर्दू भाषा की सन्धियों से बचा जा सकता था। हिन्दी ग़ज़ल की प्रामाणिकता लांछित न हो, इसके लिए उर्दू भाषा के शब्द-प्रयोग पर हमें आपत्ति नहीं होनी चाहिए। हाँ, उर्दू के संधि-प्रयोगों से हमें जरूर बचना चाहिए, क्योंकि वे हिन्दी भाषा की प्रकृति के ठीक विपरीत पड़ते हैं। खैर, मैं श्री विजय तिवारी को बधाई दूँगा कि वे इन ग़ज़लों के जरिए हमें हिन्दी ग़ज़ल की विकास यात्रा के प्रति आश्वस्त करते चलते हैं। इन ग़ज़लों की बिम्बात्मक भाषा अलग से अपनी पहचान बनाने में समर्थ है। बिम्बात्मकता की दृष्टि से एक शेर जो मुझे बेहद प्यारा लगा, उसका लुत्फ़ आप भी लें –

शाम ढ़ले परछाई हमसे,
चुपके-चुपके बतियाती है ।

सचमुच श्री विजय तिवारी की ये ग.ज़लें भी आपसे चुपके-चुपके बतियाऐंगी और इन बातों में होगा आपका देश-परिवेश, प्रेम, आस्था, खुद्दारी, सामाजिक-राजनीतिक विद्रूपताएँ-यानि वह सब कुछ जिसे आप जी रहे हैं या फिर जीना पड़ रहा है।

कुल मिलाकर हिन्दी ग़ज़ल की यात्रा में श्री विजय तिवारी की ग़ज़लें एक अच्छे शकुन का संकेत देती हैं। इन ग़ज़लों का स्वागत होना ही चाहिए।

डॉ. उर्मिलेश

रीडर एवं शोध निदेशक, हिन्दी विभाग,

नेहरु मेमोरियल शि.ना. दास स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बदायूं

• • •

स्तरीय ग़ज़ल संग्रह

आज ग़ज़ल हिन्दी के गीतिकाव्य के केन्द्र में प्रतिष्ठापित है । इसके कारण पारम्परिक हिन्दी गीत का अस्तित्व गौण हो गया है । हिन्दी ग़ज़ल का उद्भव 13 वीं शताब्दी में हुआ था और इसके प्रवर्तक अमीर खुसरो थे । तब इसे हिन्दी काव्य में अधिक महत्त्व नहीं मिला था । आज इसे हिन्दी गीति-काव्य की मुख्य विधा का महत्त्व मिला हुआ है । इस आधुनिक ग़ज़ल के प्रवर्तक के रूप में कई कवि मनिषियों के नाम लिये जाते हैं । परन्तु यथार्थ यह है कि इसके वास्तविक प्रवर्तक महाप्राण सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हैं । उन्होंने अपना ग़ज़ल सृजन हिन्दी में भी किया था और सरल उर्दू में भी । आज के अनेक ग़ज़लकार निराला जी की परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं और नये-नये प्रयोग भी कर रहे हैं ।

आधुनिक हिन्दी ग़ज़ल की लोकप्रियता एवं व्यापकता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि इसे अहिन्दी भाषी प्रदेशों के हिन्दी कवियों ने भी अपनी आत्माभिव्यक्ति का माध्मम बना लिया है ऐसे सिद्ध ग़ज़लकारों में अहमदाबाद के श्री विजय तिवारी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । वे निरालाजी की ग़ज़ल परम्परा के सम्वाहक हैं । इनके ग़ज़ल कृतित्व में हिन्दी ग़ज़ल और उर्दू ग़ज़ल का बड़ा ही मनोहारी समन्वय मिलता है । तिवारीजी कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से अपनी अलग पहचान स्थापित करने में सफल हुए हैं । इस दृष्टि से इनका नवीन ग़ज़ल संग्रह 'फल खाए शजर' का विशेष महत्त्व है इसमें हिन्दी-उर्दू की समन्वित ग़ज़ल शैली का स्वरूप अपनी पूरी प्रमाणिकता के साथ उजागर हुआ है इससे हिन्दी का ग़ज़ल साहित्य निश्चय ही समृद्ध हुआ है ।

पद्म श्री डॉ. चिरंजीत

डी. 2, ई.डी.डी.ए. फ्लैट्स, मुनीरिका, नई दिल्ली-110067

• • •

शुभकामना

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी कविता में समन्वय स्थापित करने वाले परिश्रमी और सफल कवि भाई विजय तिवारी का नया ग़ज़ल संग्रह 'फल खाए शजर' हिन्दी साहित्य की ऊँचाईयों को छुए, यही मेरी मंगलकामना है । हिन्दी ग़ज़ल में जिन कवियों की कृतियों ने अपना स्थान बनाया है उनमें विजय तिवारी की सद्य कृति 'फल खाए शजर' का भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल

सम्पादक 'स्पाइल' (दर्पण)

ओसलो, नार्वे

• • •

निजीपन और सामाजिक सरोकार की ग़ज़लें

हिन्दी कविता की मंदाकिनी में इन दिनों जिस काव्य-विधा की सरिता आकर मिली है, वह काव्य-विधा उर्दू-साहित्य की अमूल्य निधि 'ग़ज़ल' है । ग़ज़ल जब हिन्दी के साथ जुड़ी तो वह स्वयं भी समृद्ध हुई तथा हिन्दी कविता को भी समृद्ध किया ।

वैसे हिन्दी के कवियों द्वारा लिखी जानेवाली ग़ज़ल का इतिहास क्रम चाहे जितना पुराना हो किन्तु जो ग़ज़ल को हिन्दी में एक नया रंग तथा विकास मिला उसका इतिहास पिछले पच्चीस-तीस साल का है । इतने कम समय में हिन्दी ग़ज़ल ने एक लम्बा फासला तय किया और स्वयं को नये-नये मोड़ और नवीन तेवर प्रदान किये । कथ्य और शिल्प दोनों ही स्तरों पर हिन्दी में कही जाने वाली ग़ज़ल विविध-आयामी है । विषय के इतने दरवाजे पहले ग़ज़ल के लिए कभी नहीं खुले थे । शिल्प के क्षेत्र में भी प्रतीक-पद्धति की दृष्टि से ग़ज़ल ने अपना नया रूप सँवारा । ग़ज़ल की भाषा बोलचाल की भाषा के क़रीब होती गई । उर्दू वालों ने ठेठ फारसीपन को त्यागा और हिन्दी वालों ने ग़ज़ल कहते समय यह ध्यान रखा कि वह ठेठ संस्कृतनिष्ठ भाषा में बँधकर न रह जाय । आशय यह है कि उर्दू ग़ज़ल और हिन्दी ग़ज़ल दोनों ही भाषा की दृष्टि से एक दूसरे के बहुत क़रीब आई । सच पूछा जाय तो एक प्रकार से भाषा का भेदभाव ही मिट गया । इन दिनों कही जाने वाली ग़ज़ल में यदि हम हिन्दी या उर्दू ढूँढने लगें या यह पता लगाने निकल पड़ें कि अमुक ग़ज़ल हिन्दी कि है या उर्दू की, तो शायद निराशा ही हाथ लगे । बड़ा स्वस्थ लक्षण है यह । कारण यह है कि सच्ची और अच्छी ग़ज़ल बोलचाल की भाषा में ही अपना 'प्रभाव' तथा 'प्रवाह' छोड़ती है ।

अहमदाबाद के प्रसिद्ध कवि श्री विजय तिवारी का यह ग़ज़ल संग्रह 'फल खाए शजर' हिन्दी कविता के क्षेत्र में ग़ज़ल विधा की एक प्रमुख कड़ी है । श्री विजय तिवारी को ग़ज़ल कहने का सलीका आता है । निश्चय ही वह ग़ज़ल की आत्मा से परिचित हैं । उनकी ग़ज़लें वैसे बहुत सरल तथा सहज हैं किन्तु सोचो तो सोचने को मजबूर करती हैं ।

हिन्दी ग़ज़ल का मुख्य स्वर व्यंग्य का रहा है । दुष्यंत कुमार ने 'साये में धूप' ग़ज़ल-संग्रह के तरकश से जो तीर निकाले थे उनकी मार बहुत दूर तक थी । विजय की ग़ज़लों में भी आज के परिवेश की विसंगतियों पर गहरे प्रहार हैं । ऐसे प्रहार, ऐसी चोटें जो वर्तमान समाज के अनगढ़ पत्थर में से समाज की सुन्दर और पूजा योग्य मूर्ति तराशने में सफल हुई हैं । प्रहार यदि ठीक शक्ल में लाने के लिए हो तो उसे प्रहार नहीं कहा जाता वरन् उसे कला कहा जाता है । विजय की ग़ज़लें व्यवस्था पर जो चोट करती हैं वह केवल प्रहार के लिए नहीं है, वरन् समाज को

सुन्दर बनाने के लिए हैं। इस प्रकार के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं। अर्थनीति पर चोट करते हुए वे कहते हैं –

यहाँ भर पेट पानी भी मयस्सर हो नहीं पाता,
वहाँ कुत्तों को देखो दूध से नहला रहे हैं वो ।

इसी प्रकार धर्म के ठेकेदारों पर, उनकी कट्टरता को लक्ष्य करते हुए और उनकी हिंसा को दृष्टि-पथ में रखते हुए, किये गये ये व्यंग्य भी देखें –

जो कहते थे यहाँ हम दूध की नदीयाँ बहायेंगे,
ज़मीं को बेख़ता के ख़ून के नहला रहे हैं वो ।

साहित्यकारों को अधिकतर पुरस्कार तब ही मिलते हैं जब वे बूढे हो जाएँ या दिवगंत हो जाएँ। ऐसी नीति पर व्यंग्य करते हुए श्री विजय तिवारी ने एक अच्छा और सच्चा शेर कहा है –

न तो दिवंगत हूँ औ' न बूढ़ा,
पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे ।

वे लोग जिनसे औरों को कुछ मिलना चाहिए था, वे स्वयं ही सब कुछ हड़प रहे हैं। ऐसा न होता तो विजय भाई यह शेर न कहते –

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो ।

आज का युग वैज्ञानिक युग है। मशीनीकरण और शहरीकरण इसकी देन है। इस ग़ज़ल संग्रह के कवि ने शहरीकरण और मशीनीकरण के कारण छिने हुए प्राकृतिक वातावरण के सम्बन्ध की वास्तविकता को उकेरा है –

आज भौतिकवाद में औ' इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक सुबह की ताजगी मिलती नहीं ।

यों तो हमेशा ही रिश्ते टूटते और जुड़ते रहे हैं किन्तु वर्तमान समय की विसंगतियों तथा विवशताओं ने रिश्तों के साथ सबसे अधिक छेड़खानी की है। नज़दीकी और पारिवारिक रिश्तों की टूटन तो इन दिनों कुछ ज्यादा ही देखने में आ रही है। कोशिश करते हुए भी रिश्ते बच नहीं पा रहे हैं। इस सत्य को कवि विजय तिवारी ने अच्छी तरह पहचाना है और एक बहुत ही अच्छा, बहुत ही प्यारा और महत्त्वपूर्ण शेर कहा है –

ये धागा प्रेम का जुड़ जाए इस कोशिश में हूँ लेकिन,
यहाँ से जोड़ता हूँ तो वहाँ से टूट जाता है ।

रिश्तों की टूटन के प्रमुख कारणों में से एक यह कारण भी है –

पता नहीं कि ज़माने को क्या हुआ है 'विजय',
किसी को आज किसी पर भी एतबार नहीं ।

आज शिक्षा पर अधिक जोर दिया जा रहा है। शिक्षा की ज्योति के आलोक में व्यक्ति और अधिक सभ्य होना चाहिए था, विध्वंस-विरोधी तथा निर्माणकारी होना चाहिए था, किन्तु आज की शिक्षा आज के समाज को हिंसा के रास्ते पर ले जा रही है। मशाल तो इसलिए दी गई थी कि उससे रास्ते रोशन हो जायेंगे किन्तु किसी को क्या पता था कि लोग इन मशालों का दुरुपयोग करेंगे, लोगों के घर जलायेंगे।

रौशनी होगी सफर में इसलिए दी थी मशाल,
यह नहीं मालूम था वह घर जलाने आयेगा।

ग़ज़ल में यों तो अनेक शेर होते हैं, किन्तु सबसे अच्छे शेर वे माने जाते हैं जिनमें शेरियत हो तथा जीवन का गहरा अनुभव भी हो। जो 'सूक्ति वाक्य' जैसे लगें। जो किसी विशेष घड़ी में, किसी ज्वलंत घटना के घटित होने पर स्वयमेव याद आयें। विजय तिवारी जी के इस संग्रह में बीसियों शेर इस प्रकार के हैं उनमें से कुछ ये हैं, देखें –

बन्द कमरों में कभी भी रोशनी मिलती नहीं,
द्वार मन के बन्द हों तो ज़िन्दगी मिलती नहीं।

यक़ीन हो ही गया आज तुझको समझाकर,
कभी ढलान पे पानी ठहर नहीं सकता।

कभी जो प्यार किया हो किसी से तो जानो,
ये वो नशा है कभी जो उतर नहीं सकता।

आशय यह है कि यह संग्रह हिन्दी के ग़ज़ल-संग्रहों की कड़ी में एक ऐसा ग़ज़ल-संग्रह माना जायेगा जो अपने 'निजीपन' तथा 'सामाजिक सरोकार' के कारण पसंद किया जायेगा। इस संग्रह का कवि वास्तव में 'रचनाकार' है। सच्चा रचनाकार वही है जो एक ओर काव्य-रचना कर रहा हो और दूसरी ओर समाज रचना के गुरुभार को भी वहन कर रहा हो। मुझे प्रसन्नता है कि भाई विजय तिवारी अपनी रचनाओं में इस दृष्टि से एकदम खरे उतरते हैं। उन्हें पुस्तक-प्रकाशन के इस महोत्सव पर अनेक बधाइयाँ देते हुए।

डॉ. कुँअर बेचैन
रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
एम. एम. एच. कॉलेज, गाजियाबाद

• • •

एक शायर-चिंता एवं चिंतन में डूबा

यह जरूरी नहीं है कि ग़ज़ल कहने वाला हर शायर अपने वक्त की चिंता में डूबा हुआ हो और चिंतन भी कर रहा हो। श्री विजय तिवारी किन्तु ऐसे ही एक शायर हैं जो चिंता भी कर रहे हैं और चिंतन भी। उन्हें चिंता है कि देश का क्या होगा क्योंकि वे कहते हैं –

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो ।

उस देश-भूमि खंड का क्या होगा, जिसकी नदीयाँ अपना पानी स्वयं पीती हों और पेड़ स्वयं अपने फल खाते हों। कितनी कलात्मक उक्तियों के साथ शायर ने देश के प्रति अपनी चिंता व्यक्त की है।

वे केवल चिंता व्यक्त करके नहीं रह जाते। आगे भी सोचते हैं। कहते हैं –

बन्द कमरों में कभी भी रोशनी मिलती नहीं,
द्वार मन के बन्द हों तो ज़िन्दगी मिलती नहीं ।

इतना ही नहीं वे अपने चिंतन के प्रति भी सतर्क हैं। कहते हैं –

हरिक शै की तह में नज़र जा रही है,
मेरी सोच आखिर किधर जा रही है ।

एक चिंतक के लिए चिंतन आवश्यक तो है ही। उसके साथ सोच भी दिशाहीन नहीं हुई है, यह चिंता भी आवश्यक है। 'विजय' के पास यह दोनों हैं एक साथ। इसलिए उनकी चिंता आवश्यक चिंतन के साथ सार्थक हो उठती है। कविता की सार्थकता इसी में तो है।

चिंतन करते करते वह समाज की विसंगतियों पर भी दृष्टि डालता चलता है और उन पर करारा व्यंग भी करता है। समाज में पुरस्कारों की राजनीति और उसमें व्याप्त विडम्बनाओं को देखकर वह कह उठता है –

न तो दिवंगत हूँ औ' न बूढ़ा,
पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे ।

यह चिंतन का ही प्रतिफल कहा जायेगा जो कवि को समाज में व्याप्त विसंगतियों पर व्यंग्य करने को प्रेरित करता है और अपनी बात पूरी ताकत के साथ कहने की हिम्मत भी देता है।

कवि विजय की चिंता का तारतम्य बढ़ता ही जाता है, जब वह कह उठते हैं –

पतन की भयानक है खाई जहाँ पर,
डगर ये उसी मोड़ पर जा रही है ।

मूल्यों के स्खलन एवं सद्गुणों के ह्रास के प्रति निरंतर रूप से चिंतित हैं और कहते हैं –

ऐसा लगता है कि सद्‌गुण मिट चुके संसार से,
साफगोई, स्वाभिमान औ' सादगी मिलती नहीं ।

विसंगतियों की ओर इंगित करना भी व्यंग्य को प्रकारांतर से व्यक्त करना है –

यहाँ भर पेट पानी भी मयस्सर हो नहीं पाता,
वहाँ कुत्तों को देखो दूध से नहला रहे हैं वो ।

चूँकी यह चिंता है कवि को तो उसका चिंतन भी उसे विचार देता है–

हिफ़ाजत चाहते हो तो सजग रहना जरूरी है,
न गुजरे सर से पानी बांध दो पहले किनारों को ।

कवि होना अपनी जगह महत्त्वपूर्ण है किन्तु एक सामान्य मनुष्य होना उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है । सामान्य मनुष्य प्रेम करता है, प्रेम पाता है । वह उल्लसित होता है तो निराश भी । यही साधारणता उसे मनुष्य बनाये रखती है । वह कहता है –

मेरे नसीब में शायद कोई बहार नहीं,
इधर को आती कभी खुशनुमा बयार नहीं ।

सामान्य आदमी अपनी निराशा से भी उबरता है और फिर सामान्य ज़िन्दगी में व्यस्त हो जाता है ।

निराश हो के बिखर जाऊँ मैं वो शख्स नहीं,
किसी का वक्त पे बेशक है इख्तियार नहीं ।

कवि 'विजय' का स्वयं से साक्षात्कार करते हुए यह कहना –

अभी तू सीख ज़रा क्या है गीत और ग़ज़ल,
तुकें मिला के तेरा फ़न निखर नहीं सकता ।

पाठकों को सुखद आश्वासन देता है कि कवि अपनी सीमा को ख़ूब जानता है और अपनी कला के आयामों के प्रति भी चिंतित है और सचेत भी । सृष्टि के शाश्वत विषय प्रेम पर भी कवि 'विजय' ने जोर आजमाइश की है और खूब प्यारे शेर कहे हैं । उसने कमल थामी तो अब अपनी मंजिल पाये बिना उसे छोड़ेगा नहीं ।

क़लम छोड़ सकता नहीं वो कभी,
'विजय' का तू करदे भले सर कलम ।

कवि का आत्मविश्वास स्तुत्य है । मेरी बहुत बहुत शुभकामनाएँ ।

चन्द्रसेन विराट
'समय' 121, वैकुंठनाथ कॉलोनी, इन्दौर-452001

• • •

विलक्षण तरुणाई का परिचय

प्रिय बन्धु विजय तिवारी मेरे परमस्नेही मित्र हैं, अत: उनके ग़ज़ल-संग्रह 'फल खाए शजर' के प्रकाशन के अवसर पर मुझे अपरिमित आनंद की अनुभूति हो यह स्वाभाविक है ।

श्री विजय तिवारी आज पश्चिमांचल के इने-गिने ग़ज़लकारों में प्रतिष्ठित हो चुके हैं । देश-विदेश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में जब मैं उनकी ग़ज़लों को प्रकाशित होते देखता हूँ तो मेरा आनंद दूना हो जाता है । आज उनकी ग़ज़लों का यह ग्रंथस्थ एवं प्रकाशित स्वरूप देखकर मुझे संतोष हुआ ।

विजय प्रतिबद्ध कवि नहीं हैं । उन्होंने हर रंग की ग़ज़लें कही हैं । उनकी ग़ज़लें बहु आयामी हैं । कहीं, ग़ज़लकार सियासी चेहरों को बेनक़ाब करता है, कहीं शासन-प्रशासन की मक्कारियों की धज्जियाँ उड़ाता है, कहीं तथाकथित अपनों की बेवफ़ाई पर क्षोभ प्रकट करता है, तो कभी वर्तमान दोगली और विषम व्यवस्था पर जमकर प्रहार करता है । इसके अलावा विजय की ग़ज़लों में तग़ज्जुल के रंग भी आपको इतस्तत: बिखरे हुए दिखाई देंगे । प्रेम, सौंदर्य और भक्ति के रंग में डूबे चित्र भी कई शेरों में उभर आए हैं और वतनपरस्ती या राष्ट्रभक्ति से लबरेज़ शेर भी अनेकत्र पढ़ने को मिलते हैं । 'यथा नाम तथा गुण:' के अनुसार विजय की अखंड आस्था, अडिग आत्मविश्वास, अप्रतिहत मनोबल तथा उनकी जिंदादिली और ख़ुद्दारी भी उनकी, ग़ज़लों के कई शेरों में उतर आई है । वैसे तो नज़र अपनी-अपनी, ख्याल अपना अपना बहरहाल विजय की ग़ज़लों के मेरी अपनी पसंद के कुछ चुनिंदा शेर देखिए और महसूसिए उनमें निहाँ नए दौर के मुख्तलिफ़ रंग –

सभी कह रहे हैं ज़माना बुरा है,
मगर कोई ख़ुद में नहीं झाँकता है ।

क़िताबे बद ख़ुलूसी के छिपाकर स्याह पन्नों को,
ज़माने को गुलाबी आवरण दिखला रहे हैं वो ।

जिगर शरीर में फौलाद का ही रखता हूँ,
मुझे समझ न तू पारा बिखर नहीं सकता ।
लूट, चोरी, ख़ून खुलकर लोकशाही में करो,
शान से शासन तुम्हें सर पर बिठाने आएगा ।

हँसी के बाँध से सैलाबे-ग़म को रोकता तो हूँ,
मगर तन्हाई में ये बाँध अक्सर टूट जाता है ।

गरज कि विजय ने हर रंग के शेर कहे हैं, फिर भी बहुधा उनकी नज़र आज के आम आदमी और उसके दु:ख दर्दों पर ही केन्द्रित रही है । तरूण कवि विजय की कलम से निकली हुई इन ग़ज़लों में क़दम-क़दम पर आपको उनकी विलक्षण तरुणाई

का परिचय होगा। पुख्ता शाइरी और मुकम्मिल शोहरत की मंजिल उनका इंतजार कर रही है।

विजय की शाइरी यक़ीनन ग़म के मारे पाठकों के लिए सिर्फ लुत्फ़ोमज़ा का ही जरिया नहीं, वरन् राहतेजां और सुकूनेदिल भी है। प्रस्तुत है विजय की ही एक ग़ज़ल का मक्ता –

'विजय' तुम वो सुखनवर हो जो पत्थर दिल को पिघला दे,
तुम्हें सुनकर बड़ी राहत मिली हम ग़म के मारों को।

प्रिय विजय के लिए मेरी तो यही दुवा है, कि –

'ख़ुदा करे ज़ोरे क़लम और ज़ियादा !'

– भगवानदास जैन

बी-105 मंगलतीर्थ पार्क, कैनाल के पास
जशोदानगर रोड, मणीनगर (पूर्व), अहमदाबाद-382445

रोमांचकारी ग़ज़ल संग्रह

'फल खाए शजर' के शीर्षक से सम्भवत: पाठक यह समझने लगें, जैसा कि सर्वप्रथम मेरी प्रतिक्रिया थी कि यह ग़ज़ल संग्रह काफी कठिन होगा क्योंकि 'शजर' शब्द हिन्दी के शब्दकोषों में नहीं मिलता। परन्तु जैसे शजर का अर्थ इन ग़ज़लों को पढ़कर ही ज्ञात हो जाता है और साथ ही रसास्वादन भी होता है, मुझे विश्वास है कि पाठकों को श्री विजय तिवारी की 'फल खाए शजर' बहुत ही आनन्दवर्धक लगेगी और उर्दू के कुछ शब्दों का अनुपम ढंग से ज्ञान कराएगी।

यह ग़ज़ल संग्रह बड़ा ही अद्‌भुत,
इसका पठन आनन्दकारी है बहुत।
नदी पिए पानी और फल खाए शजर,
अनेकों आश्चर्यकारी दृश्य ऐसे संयुक्त।

मुझे इसमें विज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि भी दिखी। श्री तिवारी जी कहते हैं –

चाँद को सूरज प्रकाशित 'गर नहीं करता 'विजय',
तो किसी सूरत धरा को चाँदनी मिलती नहीं।

चन्द्रमा में अपना प्रकाश नहीं है बल्कि सूर्य के प्रकाश के परावर्तन से वह आलोकित लगता है। ज्योत्स्ना में अनगिनत प्रेमियों का प्रेम प्रचुर होता है और उनको रोमांचित करता है।

मुझे आशा है कि जैसे मुझ जैसे उर्दू के अल्प ज्ञान वाले व्यक्ति को इसमें आनन्द और ज्ञान दोनों का सम्मिश्रण मिला है। हिन्दी के पाठकों को खुशी का इल्म और खुशी से इल्म होगा।

श्री तिवारी जी को मेरी अनेकों शुभकामनाएँ और बधाइयाँ।

– भारतेन्दु श्रीवास्तव

64, लोंग्सवर्ड ड्राइव, स्कारबोरो, औंटेरियो-कनाडा

मन की बात

हिन्दी साहित्य में सबसे अधिक मनमोहक, दिलचस्प और आकर्षक विधा है काव्य । हिन्दी साहित्य के स्वर्ण किरीट में काव्य-विधा रूपी एक ऐसा अनमोल रत्न जड़ा हुआ है जिसकी जगमगाहट से सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य जगमगा रहा है ।

कोई भी सहृदय व्यक्ति हिन्दी काव्य-विधा के इस सम्मोहन और आकर्षण से स्वयं को न बचा सका है और न ही बचा सकता है । मेरे साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। नतीजन मैं आज तक इससे तिलिस्म से नहीं निकल सका और न ही निकलना चाहता हूँ । मैंने तो यह महसूस किया है कि जीवन का परमानन्द, चरमसुख काव्य में ही प्राप्त किया जा सकता है । कम से कम शब्द और समय में सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान, भूत, भविष्य और वर्तमान का सटीक चित्र, दर्शनशास्त्र को सरलता और सहजता से अभिव्यक्त करने की अद्‌भुत शक्ति और परमानन्द की अनुभूति जो शब्दातीत है काव्य में ही है और विशेषत: हिन्दी काव्य में । मेरे इस मत में कदाचित किसी को अतिश्योक्ति लगे किन्तु यह मेरी और नितान्त मेरी अनुभूति है ।

काव्य में भी मुझे ग़ज़ल ने विशेष रूप से आकर्षित किया है । दो पंक्तियों के योग से बना केवल एक शेर दिलोदिमाग पर गहरा और अमिट प्रभाव छोड़ जाता है । ग़ज़ल आपको कभी अकेला महसूस नहीं होने देती । ग़म के मारों के लिए ग़ज़ल दवा है, सहानुभूति और अपनेपन का प्यार भरा मरहम है और आशिक मिजाज लोगों के लिए तो यह ख़ुदा का नायाब तोहफ़ा है । विश्व का कोई भी व्यक्ति ग़ज़ल के इस जादुई चमत्कार से अपने को बचा नहीं सकता है, यह मेरा दावा है । मेहफ़िल चाहे जैसी भी हो, चाहे किसी भी विषय की हो किन्तु उसे सफल और आनन्दप्रद तभी बनाया जा सकता है, जब उसमें विषयानुकूल शेरों शाइरी की रिमझिम बौछार होती हो । शेर सुनने के बाद आदमी आह और वाह किये बिना रह नहीं सकता । यही ग़ज़ल की सबसे बड़ी ख़ूबी है ।

ग़ज़ल को लेकर आज काव्य जगत में विभिन्न विचार प्रवर्तमान हैं। ग़ज़ल को आज खेमों में बाँटा जा रहा है । हिन्दी ग़ज़ल, उर्दू ग़ज़ल, गुजराती ग़ज़ल वगैरह। क्या हम ग़ज़ल को सिर्फ ग़ज़ल नहीं रहने दे सकते ? आज सैकडों की तादाद में मुसलमान शायर दोहा, सवैया और कवित्त में सफलता पूर्वक कलम चला रहे हैं । भारतीय संस्कृति के ये गेय छन्द हैं । यदि मंच पर इन छन्दों का उचित और सही ढंग से सस्वर पाठ किया जाय तो कवि अपनी विशेष पहचान छोड़ जाता है । श्रोताओं को मंत्रमुग्ध करता हुआ कवि श्रोताओं पर छा जाता है । कई मुसलमान शायर बड़ी ख़ूबी और सफलता से इन छन्दों में कलम चला रहे हैं, और सशक्त रचनाएँ पेश कर रहे हैं । किन्तु इन्होंने कभी यह नहीं कहा कि यह उर्दू दोहा है, उर्दू सवैया है या उर्दू कवित्त है । छन्द चाहे कोई भी हो वह तो बस छन्द है । अपने विचारों की

अभिव्यक्ति का साधन मात्र है । उसे भाषाई जामा क्यों पहनाया जाय ?

मैंने कई ऐसे ग़ज़ल संग्रह भी देखे हैं, जिनकी भूमिका में ग़ज़ल के उद्‌भव, विकास और भावी सम्भावनाओं से सम्बन्धित अधूरी जानकारी देते हुए ग़ज़लकारों ने अपनी विद्वता का परिचय दिया है । मैं इसकी जरूरत महसूस नहीं करता । इसीलिए ग़ज़ल के छन्दशास्त्र एवं उसकी पाबन्दियों और अनुशासन को स्वीकार करते हुए भी मैंने न तो ग़ज़ल को किसी भाषाई खेमे में बाँटने की कोशिश की और न ही ग़ज़ल की बारीकियों को व्यक्त करके विद्वता का प्रदर्शन ही किया है । मैंने ग़ज़ल को मात्र ग़ज़ल ही कहा है । इसीलिए इनके शीर्षक देना भी मैंने मुनासिब नहीं समझा । क्योंकि ग़ज़ल का प्रत्येक शेर अपने आप में स्वतन्त्र होता है । प्रत्येक शेर में अलग-अलग मनोभावों की अभिव्यक्ति होती है । ऐसे में ग़ज़ल को किसी शीर्षक की सीमा में नहीं बाँधा जा सकता । ग़ज़ल के अलावा गीत, कविता, दोहा, सवैया, कवित्त आदि में भी मैंने अपने विचारों, मनोभावों और अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया है । काव्य की इन विधाओं में भी मैं कलम चलाने का प्रयत्न करता रहा हूँ । पाठक और श्रोताओं ने मेरी इन रचनाओं को भी खूब सराहा है । किन्तु फिर भी मेरा मन तो हमेशा ग़ज़ल में ही रमता रहा है ।

मैं प्रो. भगवानदास जैन का ह्रदय से ऋणी हूँ । यदि श्री जैन साहब का उत्साहवर्धक प्रोत्साहन और सही मार्गदर्शन न मिलता तो मैं भी दिग्भ्रांत ग़ज़लकारों की तरह भटकता रहता और तुकबन्दियाँ करता रहता । यह मेरे लिए सुखद अनुभूति है कि मुझे प्रो. भगवानदास जैन जैसे प्रतिष्ठित ग़ज़लकार के सत्संग का लाभ प्राप्त हुआ है । इनके सान्निध्य में मैंने ग़ज़ल की नब्ज पहचानी है । इसके मिजाज को परखा है । इस विधा के सूक्ष्म से सूक्ष्म पहलू को पहचानने का हुनर मुझे इन्हीं से प्राप्त हो सका है । मैं आपका चिर ऋणी हूँ ।

गुजरात में हिन्दी के शलाका पुरुष, वरिष्ठ साहित्यकार परम श्रद्धेय गुरुवर्य डॉ. अम्बाशंकर नागर के प्रति मैं श्रद्धावनत हूँ । हिन्दी साहित्य अकादमी एवं हिन्दी साहित्य परिषद के अध्यक्ष पद से आपने गुजरात के साहित्यकारों के लिए कई ऐतिहासिक कार्य किये हैं, और आज भी कर रहे हैं । गुजरात विद्यापीठ में भारतीय भाषा, हिन्दी भवन के निदेशक एवं महात्मा गांधी चेयर जैसे सर्वोच्च और अति सम्मानित आसन से आप गुजरात के साहित्यकारों के लिए सचमुच महात्मा गाँधी सिद्ध हुए हैं । यह मेरा परम सौभाग्य है कि आपके अपरिमित सौहार्द, वात्सल्य एवं प्रोत्साहन से मेरे सर्जक मन को निरन्तर संबल मिलता रहा है तथा जिनके अत्यन्त सह्रदयतापूर्ण आशीष ने इन ग़ज़लों को संग्रह का रूप दिया । साथ ही डॉ. रामकुमार गुप्त, आचार्य प्रवर रघुनाथ भट्ट मुझे सबसे अधिक चाहनेवाले डॉ. किशोर काबरा एवं डॉ. रमाकांत शर्मा प्रभृति साहित्यकारों एवं कविर्मनीषियों का प्रोत्साहन और पथप्रदर्शन मुझे अपनी काव्य-यात्रा में सदा ही मिलता रहा है । आप सभी का मैं हमेशा ऋणी रहूँगा ।

मेरे नेक काम को सबसे अधिक चाहने और सराहनेवाले आदरणीय श्री कैलाशनाथ तिवारी का तो मैं आजन्म ऋणी रहूँगा। आदरणीय श्री कैलाशनाथ तिवारी सही अर्थों में कैलाशनाथ हैं। इतनी सहृदयता, ऋजुता और ममता इस अत्याधुनिक भौतिक युग में किसी व्यक्ति में मिल पाना सचमुच काल्पनिक लगता है, और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती शोभा तिवारी का ममत्वपूर्ण सहयोग भी मेरे लिए अविस्मरणीय है। आप दोनों को मेरा हार्दिक प्रणाम। विश्वास है कि आपका सहयोग और आशीर्वाद मुझे इसी प्रकार सदैव प्राप्त होता रहेगा।

वर्तमान हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य, प्रतिष्ठित गीतकार एवं ग़ज़लकार पद्मश्री डॉ. चिरंजीत, डॉ. कुँअर बेचैन, डॉ. उर्मिलेश, श्री अंसार कंबरी, श्री चन्द्रसेन 'विराट', डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त', प्रो. भगवानदास जैन साथ ही सर्व श्री डॉ. भारतेन्दु श्रीवास्तव (कनाडा), श्रीमती उषा राजे सक्सेना (लन्दन), डॉ. नेतराम शर्मा (फीजी) एवं डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल (नार्वे) का मैं हृदय से आभारी हूँ। आप तमाम प्रबुद्ध विद्वज्जनों ने अपने व्यस्ततम समय में से कुछ बहुमूल्य क्षण निकालकर मेरी ग़ज़लों का मनोयोग से अध्ययन कर इन पर अपने बेबाक मन्तव्य देकर मेरी हौसलाअफजाई की है। आप सभी श्रेष्ठ कविर्मनीषियों के शुभाशिर्वाद पाकर मैं कृतार्थ हो गया हूँ। आप सभी का मैं हृदय से ऋणी हूँ।

मेरी पत्नी कुसुम तिवारी ने यक़ीनन अपने दायित्व को सम्पूर्ण सफलता और कुशलता से निभाया है। गृहस्थी की जिम्मेदारियों का कम से कम बोझ मुझ पर पड़े इस बात का हमेशा ध्यान रखा है। मुझे अपने साहित्यिक दायित्व - निर्वाह के लिए अधिक से अधिक समय देकर मेरा पथ प्रशस्त किया है। मेरी इस साहित्यिक यात्रा में कई ऐसे भी मोड़ आए हैं जहाँ मुझे यदि कुसुम की खुशबू का सहारा न मिलता तो शायद मेरे अन्दर का कवि कभी का अस्त हो चुका होता। लेकिन जहेनसीब कुसुम ने मुझे कभी क्षुब्ध या हताश नहीं होने दिया।

मित्र जोसफ जोर्ज जैसा मित्र पाकर मैंने जीवन जीने की सही कला पाई। तमाम परेशानियों और उलझनों के बीच से मार्ग बनाते हुए जीवन की सफलता के शिखर तक पहुँचना कोई जोसफ जोर्ज से सीखे। मेरी साहित्यिक यात्रा में हमेशा मुस्कुराकर मेरा साथ देता रहा, मेरी हौसलाअफजाई करता रहा। सभी को सुख देने की आदर्श और उच्चभावना जिसमें कूट-कूट कर भरी है वह मेरा मित्र है, इस बात का मुझे गर्व है।

मैं अपने माता-पिता का सबसे अधिक ऋणी हूँ। निस्संदेह जीवनभर मैं आपके ऋण से उऋण नहीं हो सकता। आपने शिक्षा-दीक्षा और आदर्श संस्कार देकर मेरा जीवन सफल कर दिया है। मैं उनके चरणों में नतमस्तक हूँ। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि मुझ पर माता-पिता की शीतल-सुखद छत्रछाया सदैव बनी रहे और उनके शुभाशिर्वाद मुझे जीवनभर मिलते रहें।

अन्त में अपने उन तमाम मित्रों और पाठकों का भी मैं ऋण स्वीकार करता हूँ, जिन्होंने मेरे शेरों को पढ़ा-सुना, सराहा और मेरी हौसलाअफजाई की । अपने इन्हीं कद्रदान दोस्तों की बदौलत आज की साहित्यिक गुटबन्दियों और खेमेबाजियों के बावजूद मेरे अन्दर का शायर जीवित है । इस संग्रह में संकलित लगभग सभी ग़ज़लें देश-विदेश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं । ग़ज़लों पर पाठकों की सराहना और प्रशंसा ने ही इन्हें ग्रंन्थस्थ रूप देने को मुझे सम्प्रेरित किया है । अत: मैं अपने तमाम रसिक पाठकों का भी हृदय से आभारी हूँ ।

अब यह संग्रह आप तमाम सहृदय पाठकों एवं प्रबुद्ध समीक्षकों के सम्मुख सादर प्रस्तुत कर रहा हूँ । इस पर आपकी बेबाक टिप्पणियाँ, आपके विचारों और सुझावों की मुझे बड़ी बेसब्री से प्रतीक्षा है । मुझे श्रद्धा है कि आपके सुझावों और मार्गदर्शनों से मैं अवश्य ही लाभान्वित एवं कृतार्थ रहूँगा ।

14 सितम्बर, 1999 — विजय तिवारी

पचासवाँ हिन्दी दिवस

• • •

अनुक्रम

1.	आस छोड़ूँ ना कभी हे माँ मुझे वो शक्ति दे,	27
2.	बड़ा विवश है कभी कुछ भी कर नहीं सकता,	28
3.	आप माने या न मानें पर वो दिन भी आएगा,	29
4.	हर ख़ुशी दोस्तों में लुटाता रहा,	30
5.	राह में काँटे बिछा दो फिर भी मैं चलता रहूँगा	31
6.	ये न समझो कि कलम ही मैं चला सकता हूँ,	32
7.	मेरे नसीब में शायद कोई बहार नहीं,	33
8.	मतलब की दुनिया है रिश्ते हैं नाम के,	34
9.	दोस्त हमने हजार पाए हैं,	35
10.	रंग बिरंगी ये झण्डी,	36
11.	दिखा सपने सुहाने बाग़ को बहला रहे हैं वो,	37
12.	ये कैसी आग में झुलसा दिया तुमने बहारों को,	38
13.	रोने वाले इस दुनिया में तेरा कोई काम नहीं,	39
14.	बन्द कमरों में कभी भी रौशनी मिलती नहीं,	40
15.	आ गया है वक़्त वो बस्ती जलाने आएगा,	41
16.	याद तुम्हारी ये लाती है,	42
17.	आँखें हैं नशीली-सी गेसू हैं घटाओं से,	43
18.	राम नामी ओढ़कर वह शख़्स मुझको छल रहा,	44
19.	पछताओगे तुम देखो, यूँ हमसे ख़फ़ा हो के,	45
20.	ज़माने तू करले सितम पर सितम	46
21.	मोती टपक रहे हैं भीगी लटों से उनके,	47
22.	हर गली में गुफ़्तगू होने लगी,	48
23.	देख दुखों को क्यों रोता है ?	49
24.	वक़्त ऐसा भी कभी आएगा ये सोचा न था,	50
25.	हँसे थे होठ मगर दिल तो मुस्कुरा न सका,	51
26.	तुम दिल के इतने करीब हो,	52
27.	ज़िन्दगी का आईना है जिक्र है हालात का,	53
28.	दूसरों की ख़ुशी से न जल जाइए,	54
29.	ज़िन्दगी को बोझ की मानिंद अब ढोता नहीं,	55
30.	फुल हमने बिछाए हैं हर राह पर,	56
31.	यूँ ही हमको सताया करो,	57
32.	मैं जख़्म दिल का दिखाऊँ कैसे,	58
33.	ये कैसा करिश्मा है हैराँ है नज़र देखो,	59
34.	मानवता, ईमान, भलाई के रस्ते पे चलते हैं,	60
35.	हथेली गाल पे रखकर वो बैठना उनका,	61

36.	कहाँ को चले थे कहाँ आ गये हैं,	62
37.	इस क़दर बेज़ार हूँ कि कुछ समझ आता नहीं,	63
38.	गिला करता हूँ दामन सब्र का जब छूट जाता है,	64
39.	ज़माने का हर जुल्म हँस के सहा है,	65
40.	नाजुक हैं तेरे पाँव तो चलना कभी नहीं,	66
41.	क्रान्ति करती भूख यारो अब बहल सकती नहीं,	67
42.	क्या बताएँ कैसे-कैसे हादसे सहते रहे,	68
43.	तेरी यादों ने कभी चैन से रहने न दिया	69
44.	बताएँ क्या गरीबी में यूँ गीला हो गया आटा,	70
45.	हरिक शै की तह में नज़र जा रही है,	71
46.	बरसात के मौसम में बस एक ही ख्वाहिश है,	72
47.	नहीं है गाँव तेरा नये युग का शहर है,	73
48.	थिरक-थिरक लहर-लहर रिमझिम बरसात है,	74
49.	हो सके तो कभी याद करना हमें, ज़िन्दगी के सफ़र में मिले थे कभी,	75
50.	कोई नहीं है जिसको अपने दिल की हालत बतलाऊँ,	76
51.	आपके सामने हादसा हो गया,	77
52.	रही जिसकी चाहत मुझे उम्र भर,	78
53.	चलेंगे हमेशा वफ़ा की डगर वो,	79
54.	हादसा बीत गया याद दुबारा न करो,	80
55.	ख़फ़ा मैं नहीं हूँ किसी बात से,	81
56.	लाखों दरिया पी के इसकी तिश्नगी बुझती नहीं !	82
57.	हर वक़्त देखिए तो उफनते हुए सवाल,	83
58.	तलाश की गई यारो तो उजड़ा दिल निकला,	84
59.	दिलों में दर्द होगा तो जवाँ होगी मुहब्बत फिर,	85
60.	हमारे चाहने वाले जहाँ में कम नहीं हैं,	86
61.	अगर बुरा न लगे तो हम एक बात कहें,	87
62.	नमक, मिर्च, आटा, लकड़ी,	88
63.	ये कैसा करिश्मा है चाहूँ भूलना मगर याद करता चला जा रहा हूँ,	90
64.	यहाँ हर आदमी में इक नया मंज़र नज़र आया,	91
65.	बारहा मैं आदमी के ख़ून को क्यों जाँचता हूँ,	92
66.	कल तक जो अपने थे अब वो बेगाने-से रहते हैं,	93
67.	मुझे तो चाहिए यह आसमाँ पूरा का पूरा ही,	94
68.	हर तरफ अचरज के ही बस सिलसिले हैं,	95
69.	हरिक राह में सिर्फ काँटे बिछे हैं, मगर फिर भी बढ़ता चला जा रहा है,	96

• • •

आस छोड़ूँ ना कभी हे माँ मुझे वो शक्ति दे,
ज्योति में तम को बदल दूँ मुझमें ऐसी भक्ति दे ।

झूठ की छाया भी छू ना पाए मेरी बात को,
इस तरह मेरे कथन में सत्य की अभिव्यक्ति दे ।

बोध हो कर्तव्य का, आदर्श से भी ना डिगूँ,
विश्व को कर दे प्रकाशित मुझमें ऐसा व्यक्ति दे ।

लोभ, तृष्णा, छल, प्रपंचों से भरे युग में यहाँ,
सदगुणों की कर सकूँ रक्षा जगत में युक्ति दे ।

माँगता वरदान वीणावादिनी माँ शारदे,
तेरे चरणों में ही छूटे प्राण वो अनुरक्ति दे ।

हार जीवन में 'विजय' की हो न पाए माँ कभी,
शब्द मेरे हों चिरन्तन काल से भी मुक्ति दे ।

❀

बड़ा विवश है कभी कुछ भी कर नहीं सकता,
ख़ुशी से जी न सका और मर नहीं सकता।

ख़याल है ये ग़लत ही किसी बगीचे को,
गुलाब 'गर न मिले तो निखर नहीं सकता।

जहाँ में कर न सकेगा अगर ख़ुशामद तो,
करे वो लाख जतन पर उभर नहीं सकता।

सभी कहेंगे उसे बेवक़ूफ़ दुनिया में,
जो ख़ुद के दोष किसी सर पे धर नहीं सकता।

यक़ीन हो ही गया आज तुझको समझाकर,
कभी ढलान पे पानी ठहर नहीं सकता।

कभी जो प्यार किया हो किसी से तो जानो,
ये वो नशा है कभी जो उतर नहीं सकता।

अभी जमीर मरा ही नहीं इसी कारण,
निभा रहा हूँ वचन मैं मुकर नहीं सकता।

अभी तू सीख ज़रा क्या है गीत और ग़ज़ल,
तुकें मिला के तेरा फ़न निखर नहीं सकता।

जिगर शरीर में फौलाद का ही रखता हूँ,
मुझे समझ न तू पारा, बिखर नहीं सकता।

किया लिहाज 'विजय' ने नहीं तो दुनिया में,
सिवा ख़ुदा के किसी से भी डर नहीं सकता।

आप माने या न मानें पर वो दिन भी आएगा,
मंच पर सम्मान से सच को नवाजा जाएगा ।

जो ख़ुशामद में लगा है एक दिन पछताएगा,
कर्मयोगी ही अलौकिक सुख जहाँ में पाएगा ।

चील, कौए, लोमड़ी सब देखते रह जाएँगे,
हंस फिर सोने की थाली में ही मोती खाएगा ।

निष्कपट है और जो है नेकदिल इस विश्व में,
शख़्स वो ही प्यार के रंगीन नगमे गाएगा ।

जानता हूँ मैं मिजाज अपने हरिक हमदर्द का,
घाव दिल का भर न पाए इस तरह सहलाएगा ।

शौक से यूरोप भेजे हिन्द में रॉक और पॉप,
संस्कृति भारत की है दृढ़ क्या कोई बहकाएगा ।

जब बग़ावत कर उठेगी इस चमन की हर कली,
बाग़बाँ उस दिन 'विजय' रोएगा औ' पछताएगा ।

हर ख़ुशी दोस्तों में लुटाता रहा,
मैं ग़मों को धुएँ मैं उड़ाता रहा ।

पेश दिल को करूँ आपके सामने,
आज तक हौसले में बढ़ाता रहा ।

राह में छोड़कर चल दिये वो मगर,
गीत फिर भी यूँ ही गुनगुनाता रहा ।

इस जहाँ ने न जाने कहाँ चोट की,
बेख़ुदी में भी आँसू बहाता रहा ।

बेवफ़ाई हमेशा वो करते रहे,
साथ उनका मैं फिर भी निभाता रहा ।

चैन से दो घड़ी जी सकूँ इसलिए,
जाम पी के ग़मों को भुलाता रहा ।

राह में काँटे बिछा दो फिर भी मै चलता रहूँगा,
आँधियों में भी दिया बन कर के मैं जलता रहूँगा।

तान कर सीना हमेशा मौत से लड़ता रहूँगा,
शान से मर कर दिलों में तो सदा पलता रहूँगा।

मुश्किलों से डर के जो मर जाएँ वो तो और होंगे,
जीत हो या हार पर संघर्ष मैं करता रहूँगा।

मैंने अपना घर जलाकर रौशनी दुनिया को दी है,
मिल सके सुख इस जहाँ को इसलिए मरता रहूँगा।

हाथ से मेरे क़लम भी छीन ले चाहे ज़माना,
फिर भी अपने ख़ून से तो गीत मैं लिखता रहूँगा।

सोचता हूँ मौत से भी आज दो-दो हाथ करलूँ,
मिट गया तो भी सदा इतिहास मैं बनता रहूँगा।

चाहता हूँ बस यही बन जाऊँ 'गर मैं भी 'विजय'-सा,
तो मुसीबत में भी फिर मदमस्त हो हँसता रहूँगा।

ये न समझो कि कलम ही मैं चला सकता हूँ,
आ पड़े वक्त तो शमशीर उठा सकता हूँ ।

तू है दुश्मन तो तेरा ख़ून बहा सकता हूँ,
और 'गर यार है तो जान लुटा सकता हूँ ।

ऐ ख़ुदा मुझसे तू जन्नत न बचा पाएगा,
इस ज़मीं पे मैं उसे खींच के ला सकता हूँ ।

आप पत्थर पे भी फूलों को लगा सकते हैं,
मैं हवा में भी नए फूल खिला सकता हूँ ।

आप समझे हैं मुझे मोम का पुतला ही मगर,
मैं तो फौलाद को भी मोम बना सकता हूँ ।

आप क्या चीज़ हैं मैं गीत ग़ज़ल से अपने,
चाँद, सूरज ये सितारे भी नचा सकता हूँ ।

ऐ 'विजय' मेरी कलम में हैं करामात बड़े,
आग पानी में भी चाहूँ तो लगा सकता हूँ ।

मेरे नसीब में शायद कोई बहार नहीं,
इधर को आती कभी ख़ुशनुमा बयार नहीं ।

सज़ा-ए-मौत मिली हमको जुर्मे उल्फ़त पर,
वो क़त्ल कर के भी ठहरे गुनाहगार नहीं ।

ख़ुशी के नाम पे इतने फरेब खाए हैं,
कि अब ख़ुशी का मुझे कोई इन्तज़ार नहीं ।

क़दम-क़दम पे मेरे साथ साज़िशें क्यों हैं ?
जहाँ में मेरी किसी से भी कोई रार नहीं ।

निराश हो के बिखर जाऊँ मैं वो शख़्स नहीं,
किसी का वक्त पे बेशक है इख़्तियार नहीं ।

जलाले दीप निडर हो के यार तूफ़ाँ में,
हुई कभी भी किसी रौशनी की हार नहीं ।

पता नहीं कि ज़माने को क्या हुआ है 'विजय',
किसी को आज किसी पर भी एतबार नहीं ।

मतलब की दुनिया है रिश्ते हैं नाम के,
मिलता है सब कुछ ही बदले में दाम के ।

फूलों को तोड़ दिया नोची हर इक कली,
बनते हैं बन्दे फिर अल्ला के राम के ।

ऐसे भी लोग यहाँ देखे हैं बाग़ में,
खाते हैं केला गुण गाते हैं आम के ।

मस्जिद की चादर धन मन्दिर का लूट के,
चरणों में अर्पण करते हैं गुलफाम के ।

हम में तो जीने की हिम्मत ही आ गई,
धमकी के ख़त जब भी आए गुमनाम के ।

उसने पहुँचाया है सदमा ऐसा 'विजय',
उफ तक ना बोल सके हाय दिल थाम के ।

❀

दोस्त हमने हजार पाए हैं,
जख़्म भी बेशुमार पाए हैं ।

बेगुनाहों का क़त्ल देखा है,
और मुजरिम फ़रार पाए हैं ।

शेर की खाल ओढ़कर अक्सर,
राज करते सियार पाए हैं ।

मौत के द्वार पर पहुँचकर लोग,
ज़ीस्त का बोझ उतार पाए हैं ।

झुर्रियाँ चहरे की बताएँगी,
उम्र कैसे गुजार पाए हैं ?

फूल सबको दिए 'विजय' हमने,
और बदले में ख़ार पाए हैं ।

रंग बिरंगी ये झण्डी,
रोज बदलती है डण्डी ।

देख सियासत के रंग-ढंग,
रूप बदलती ज्यों रण्डी ।

लगते हैं नेता भी अब,
घोर शिखण्डी पाखण्डी ।

मोल यहाँ सब बिकता है,
ये दुनिया है या मण्डी ?

पक्की पापी सड़कों के,
पाँव पड़े क्यों पगडण्डी ।

पापी सब मिट जाएँगे,
बनना होगा रणचण्डी ।

भोजन बनता था साझा,
फूट गई है वो हण्डी ।

जोर लगाकर खोल ज़रा,
खुल जाएगी हर कुण्डी !

क्या होगा झुग्गी का अब,
महलों को लगती ठण्डी ।

तुम हो काली सड़कों-सी,
हम उजली-सी पगडण्डी ।

दिखा सपने सुहाने बाग़ को बहला रहे हैं वो,
सिवा अपने न कोई बाग़बाँ बतला रहे हैं वो ।

किताबे-बदख़ुलूसी के छिपा कर स्याह पन्नों को,
ज़माने को गुलाबी आवरण दिखला रहे हैं वो ।

यहाँ भर पेट पानी भी मयस्सर हो नहीं पाता,
वहाँ कुत्तों को देखो दूध से नहला रहे हैं वो ।

गुलों को लूट के जंगल बना डाला गुलिस्ताँ को,
मगर अब साहिबे-फ़न बाग़बाँ कहला रहे हैं वो ।

हमारी साफगोई दोस्तो उनको न रास आई,
खरी कह दी भरी महफ़िल में तो झुँझला रहे हैं वो ।

जो कहते थे यहाँ हम दूध की नदियाँ बहाएँगे,
ज़मीं को बेख़ता के ख़ून से नहला रहे हैं वो ।

धरम के नाम पर अब सिर्फ पत्थर की ही मूरत को,
सजा के थाल छप्पन भोग के दिखला रहे हैं वो ।

ज़माने की नज़र में तो मेरे ग़मख़्वार हैं लेकिन,
रहे ताज़ा मेरा हर ज़ख़्म यूँ सहला रहे हैं वो ।

ये कैसी आग में झुलसा दिया तुमने बहारों को,
धुएँ के नाग काले डस रहे रंगीं नज़ारों को ।

अगर नफ़रत मिटाना चाहते हो तुम दिलों से तो,
ये हिन्दु वो मुसलमाँ है मिटा दो ऐसे नारों को ।

नई दुल्हन की डोली को शहर की भीड़ में लूटा,
दिया हमने ही रहकर मौन ये साहस कहारों को ।

हिफ़ाज़त चाहते हो तो सजग रहना जरूरी है,
न गुजरे सर से पानी बाँध दो पहले किनारों को ।

अगर ये चाहते हो तुम चमन में फिर बहार आए,
खिलाकर फूल चाहत के, बुलावा दो बहारों को ।

अधूरा इल्म लेकर जो उजालों में रहे कल तक,
वही अब दे रहे हैं आज गाली चाँद-तारों को ।

अगर अरमान हैं दिल में भरोसा बाजुओं पे है,
तो दुनिया रोक क्या पायेगी ऐसे जाँ-निसारों को ।

हमें है जान से प्यारा ज़मीं का स्वर्ग ये अपना,
न देंगे हम किसी क़ीमत पे जीते जी चिनारों को ।

'विजय' तुम वो सुखनवर हो जो पत्थर दिल को पिघला दे,
तुम्हें सुनकर बड़ी राहत मिली हम ग़म के मारों को ।

❀

रोने वाले इस दुनिया में तेरा कोई काम नहीं,
छीन ले बढ़कर हक़ तू अपना दिल को ऐसे थाम नहीं ।

कोई नहीं है दुश्मन मेरा जब से ये मालूम हुआ,
तब से चैन सुकून नहीं है और ज़रा आराम नहीं ।

इस दुनिया में उसका जीना भी क्या कोई जीना है,
जिसने कभी कुछ दुख न सहा हो जो थोड़ा बदनाम नहीं।

पुरुषोत्तम तुम ख़ूब बनो पर मुझको रास रचाने दो,
श्याम बनूँ बस चाह यही है मुझको बनना राम नहीं ।

बाइज जब से आने लगे हैं तब से ही यह हाल हुआ,
रीता-रीता मयखाना है साकी नहीं है जाम नहीं ।

ज़न्नत-दोज़ख सब हैं यहीं पर पाप करो या पुण्य करो,
क़ुदरत की नज़रों में कोई खास नहीं और आम नहीं ।

मिल जाए 'गर कहीं ज़िन्दगी तो उससे ये कह देना,
मेरी बरबादी का तुझ पे कोई भी इल्जाम नहीं ।

टूट चुकी हैं सब दीवारें सन्नाटे का राज़ हुआ,
धूल भरे इस खँड़हर घर का अब कोई भी नाम नहीं ।

बीता दिन आपाधापी में रात में लम्बी तान गये,
शहरों में इक-दूजे से अब होती दुआ-सलाम नहीं ।

जीने का अन्दाज़ नीराला हमको भाया ख़ूब 'विजय',
सूना-सूना गुलदस्ता हो चाहे रौशन शाम नहीं ।

बन्द कमरों में कभी भी रौशनी मिलती नहीं,
द्वार मन के बन्द हों तो ज़िन्दगी मिलती नहीं ।

तान कर सीना अहम् का सब को ठुकराता अगर,
तो समन्दर से कभी कोई नदी मिलती नहीं ।

दर्द के सैयाद ने जिस पर नज़र डाली न हो,
इस चमन में कोई भी ऐसी कली मिलती नहीं ।

ऐसा लगता है कि सदगुण मिट चुके संसार से,
साफगोई स्वाभिमान औ' सादगी मिलती नहीं ।

आज भौतिकवाद में औ' इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक सुबह की ताजगी मिलती नहीं ?

राह मंज़िल की कभी भी पा नहीं सकते थे हम,
'गर हमें नज़रें इनायत आपकी मिलती नहीं ।

चाँद को सूरज प्रकाशित 'गर नहीं करता 'विजय',
तो किसी सूरत धरा को चाँदनी मिलती नहीं ।

आ गया है वक़्त तो बस्ती जलाने आएगा,
फिर वही दमकल लिए इसको बुझाने आएगा ।

जो अभी पर्यावरण पर दे गया भाषण यहाँ,
देखना वो रात में जंगल कटाने आएगा ।

लूट, चोरी, ख़ून खुलकर लोकशाही में करो,
शास ने शासन तुम्हें सर पर बिठाने आएगा ।

कौरवों के साथ गिरधर भी खड़े हैं युद्ध में,
कौन फिर पाण्डव को अब कैसे बचाने आएगा ।

छोड़ना मत यूँ अकेला इस तरह सुनसान में,
भेष में साधू के वो सीता चुराने आएगा ।

रौशनी होगी सफ़र में इसलिए दी थी मशाल,
यह नहीं मालूम था वो घर जलाने आएगा ।

स्वार्थ, लालच में यहाँ हर शख्स अंधा हो गया,
कौन किसको प्यार से छाती लगाने आएगा ।

फिर हुआ मतभेद हममें बात उसने ताड़ ली,
तो पड़ोसी हमको आपस में लड़ाने आएगा ।

लिख 'विजय' सारी हक़ीक़त यूँ कि वो भी रो उठे,
तब सबक वह प्यार का जग को पढ़ाने आएगा ।

याद तुम्हारी ये लाती है,
रात न जाने क्यों आती है ।

शीतलता भी अब तन मन को,
ना जाने क्यों झुलसाती है ।

शाम ढले परछाई हमसे,
चुपके-चुपके बतियाती है ।

झील लगे जंगल में जैसे,
पायलिया-सी खनकाती है ।

तपते मन पर आँख की बदली,
शीतल आँसू बरसाती है ।

कोयल चुप ही रहती है या,
गीत ख़ुशी के ही गाती है ।

बीच भँवर में हिम्मत हमको,
जीवन जीना सिखलाती है ।

चाक किया जाता है सीना,
धरती फिर भी मुसकाती है ।

पी सकता है विष ये 'विजय' ही,
फौलादी उसकी छाती है ।

आँखे हैं नशीली-सी गेसू हैं घटाओं से,
होठों के ये मयख़ाने हैं गाल गुलाबों से ।

तसवीर तुम्हारी ही इस दिल में बसा ली है,
जाओगे कहाँ अब तुम छिपकर के निगाहों से ।

हर बार गिरे चाहे हर बूँद बिखर जाए,
फिर भी लहरें आकर टकराएँ किनारों से ।

झनकार सुनाई दे इस झील में तेरी ही,
तेरी ही महक आये रंगीन फ़जाओं से ।

हर एक कली ख़ुश है औ' नाच रही तितली,
लगता है कि गुजरे हैं वो आज बहारों से ।

इल्जाम नहीं तुझ पे पर बात यही सच है,
मदहोश हुआ हूँ मैं तेरी ही अदाओं से ।

ये जान निछावर है अन्दाज़ पे उनके तो,
जब बात करे हँसकर शरमा के इशारों से ।

क्यों छोड़ दिया पीना हालात ज़रा देखो,
वो नूर नहीं मुँह पे हैं हाल ख़िज़ाओं से ।

जन्नत पहुँचाने की साजिश करी ली फिर भी,
कहते हैं बचा है 'विजय' मेरी ही दुआओं से ।

❀

राम नामी ओढ़कर वह शख़्स मुझको छल रहा,
स्वार्थ-साधन के लिए ही साथ मेरे चल रहा ।

प्रान्त भाषावाद में आतंक चारों ओर है,
हर दिशा में आग है यह देश मेरा जल रहा ।

सोंप दी हाथों में जिसके डोर अपने भाग्य की,
क्या कहें वो जानी दुश्मन दोस्त बनकर छल रहा ।

हो गया है आदमी आज़ाद लेकिन आज भी,
हर शहर में, हर नज़र में ख़ौफ़ ही बस पल रहा ।

दे रहे उपदेश जो बैठे सभा में मंच पर,
कौम के दंगों में उनका हर तरह से बल रहा ।

कोख के मोती ने देखो लाज माँ की बेच दी,
खींच डाले वस्त्र सारे और आँचल जल रहा ।

क्यों अँधेरा छा रहा है आज सारे मुल्क में ?
देश के सूरज का यारो तेज देखो ढल रहा ।

जानता हूँ यह ग़ज़ल सुनकर ख़फ़ा वो हो गए,
इस तरह उनको हक़ी.कत आम करना खल रहा ।

पछताओगे तुम देखो, यूँ हमसे ख़फ़ा हो के,
फिर फूल नहीं खिलता, टहनी से जुदा हो के ।

वो भूल गए तो क्या, है याद मुझे अब भी,
झेली थी जफ़ा उनकी, पाबन्दे-वफ़ा हो के ।

देता हूँ दुआ लेकिन, रहता है गुमाँ ये भी,
भूलेगा मुझे ही तू इक रोज़ बड़ा हो के ।

सूरज की तपिश से जब, दम घुटने लगे तेरा,
आवाज़ मुझे देना बरसूँगा घटा हो के ।

छूले जो ग़ज़ल मेरी, तू अपने लबों से तो,
आकाश को छूलूँगा, मैं तेरी सदा हो के ।

ज़हरीली फ़ज़ाओं से लगता है मुझे शायद,
इस गाँव में आई है शहरों से हवा हो के ।

कह दो ये ज़माने से कुछ और सितम कर ले,
इस आग में तपकर मैं, निकलूँगा खरा हो के ।

आया है अगर मौका, कुछ करके दिखाने का,
दिखला दो 'विजय' तुम भी, यारी में फ़ना हो के ।

ज़माने तू कर ले सितम पर सितम
मगर टूटकर अब न बिखरेंगे हम ।

जहाँ में नहीं हम किसी से भी कम,
समझ ले कि नहले पे दहले हैं हम ।

परेशान करना हमें छोड़ दे,
कहीं बम न बन जाए मेरी क़लम ।

खिलौना समझकर तू हमसे न खेल,
निकल ही न जाए कहीं तेरा दम ।

दबा दो हमें कोहे-ग़म के तले,
करेंगे न उफ हम तुम्हारी क़सम ।

सुन-ए-जीस्त मैं हूँ बहर तौर ख़ुश,
न शिकवा है कोई न है कोई ग़म ।

क़लम छोड़ सकता नहीं वो कभी,
'विजय' का तू कर दे भले सर क़लम ।

मोटी टपक रहे हैं भीगी लटों से उनके,
मौसम हुआ गुलाबी अरमान जागे मन के ।

बरसात में नहा के क्या ख़ूब लग रहे हैं,
शरमा के भीगा आँचल लिपटा है तन से उनके।

मस्ती से वो चलेगा ख़ुशबू से भर उठेगा,
नज़दीक से भी गुजरे झोंका जो उस बदन के ।

यूँ भी अदा तुम्हारी क़ातिल बहुत है जानम,
निकलो न यार तिसपर सज-धज के और बन के।

यूँ बेनक़ाब हो के क्यों आ गये यहाँ पर,
अब होश में नहीं हैं सब फूल इस चमन के ।

शरमा के कुछ लजा के घूँघट ज़रा निकालो,
गुजरे ज़माने अब वो मासूम लड़कपन के ।

रोको न आज दिल को हो जाय जो हो ने दो,
पीने दो जाम जम के मदमस्त उस नयन के ।

हर गली में गुफ़्तगू होने लगी,
रूसवा मेरी आरज़ू होने लगी ।

हर क़दम हर पल वो मेरे साथ है,
फिर भी उसकी जुस्तजू होने लगी ।

कौन अपना है पराया कौन है,
सब हक़ीक़त रूबरू होने लगी ।

जब कली गुल बन गई तो यकबयक,
चर्चा उसकी चार-सू होने लगी ।

इस क़दर वो बेमुरव्वत हो गए,
"आप से तुम, तुम से तू होने लगी ।"

गीत भी बिकने लगे बाज़ार में,
भावना भी फ़ालतू होने लगी ।

है 'विजय' यारो बड़ा सुलझा हुआ,
बात ये अब कू ब कू होने लगी ।

देख दुखों को क्यों रोता है ?
जीवन में ऐसा होता है ।

क्यूँ ना सोचा-समझा पहले,
दाग लगे तो क्या धोता है ।

छोड़ चला जाएगा इक दिन,
इस पिंजरे में जो तोता है ।

भीख नहीं हक़ माँग रहा तू,
जीवन का शव क्यों ढोता है ?

सत्ता की इस लफ़्फाजी में,
जनता तो गूँगी श्रोता है ।

न्यायालय बहरा-अन्धा है,
न्याय यहाँ अब तो सोता है ।

❀

वक़्त ऐसा भी कभी आएगा ये सोचा न था,
छोड़कर साया चला जाएगा ये सोचा न था ।

ताक पर रख दे सभी आदर्श, मानवता, दया,
विश्व में जन्नत वही पाएगा ये सोचा न था ।

जानता हो आदमी के ख़ून पीने का हुनर,
माल मेवा तो वही खाएगा ये सोचा न था ।

लोकशाही से उठा बादल बरसने आ गया,
ख़ून की बारिश में नहलाएगा ये सोचा न था ।

स्वर्ण-सा इस विश्व में जो चमचमाता था महल,
राख का अब ढेर कहलाएगा ये सोचा न था ।

बाग़बाँ काबिल बहुत था, जानते हैं हम मगर,
इस तरह यह बाग़ मुरझाएगा ये सोचा न था ।

ऐ 'विजय' हमदर्द ने नासूर इसको कर दिया,
इस तरह वो घाव सहलाएगा ये सोचा न था ।

हँसे थे होंठ मगर दिल तो मुस्कुरा न सका,
मिला ख़ुलूस से लेकिन दगा छिपा न सका ।

सभी ख़ुतूत मुहब्बत के राख कर डाले,
तुम्हारी याद मगर दिल से मैं मिटा न सका ।

हुआ है प्यार तो बरबाद तुझको होना है,
ख़िजाँ से कोई भी गुलशन कभी बचा न सका ।

गुनाह उसके सभी माफ़ कर दिये फिर भी,
वो शख़्स मुझसे निगाहें कभी मिला न सका ।

ख़ुशी ख़ुशी न रही रंजो-ग़म के साए में,
ख़ुशी का गीत कभी दिल से गुनगुना न सका ।

नज़र बचा के सभी से नज़र नज़र से मिली,
नज़र मिला के नज़र से नज़र हटा न सका ।

गुलाबी गाल पे जुल्फ़ों का खेलना औ' फिर,
तेरा अदा से हटाना उन्हें भुला न सका ।

हसीन और भी दुनिया में हैं 'विजय' के सिवा,
गले किसी को भी लेकिन कभी लगा न सका ।

तुम दिल के इतने करीब हो,
जैसे की कोई अक़ीब हो ।

ताउम्र निभाए साथ मेरा,
हसरत है ऐसा हबीब हो ।

तुझको मैं इतना प्यार करूँ,
हर शख़्स कहे तुम अजीब हो ।

मैं एक मरीजे इश्क हूँ औ'
तुम ख़ुद ही मेरे तबीब हो ।

हो चाँद-सा मुखड़ा पहलू में,
बस अपना ऐसा नसीब हो ।

मैं ख़ुशी-ख़ुशी मर जाऊँ अगर,
तेरी बाँहों का सलीब हो ।

हो प्यार का ज़ज्बा हर दिल में,
कोई न किसी का रक़ीब हो।

ऐ ख़ुदा दुआ ये क़बूल कर,
कोई न जहाँ में गरीब हो ।

ये कैसी सियासत हो गई है,
कोई तो उमदा नजीब हो ।

तुमको सुनकर यूँ लगा 'विजय',
तुम हर दिल अज़ीज़ अदीब हो ।

ज़िन्दगी का आईना है जिक्र है हालात का,
शाइरी इज़हार है मेरे दिल ज़ज्बात का ।

सत्य का दीपक जलाकर आ गया मैदान में,
डर नहीं है झूठ के कैसे भी झंझावात का ।

ज़िन्दगी को कोसने वाले सफल होते नहीं,
ज़िन्दगी तो नाम है सबसे हसीं सौगात का ।

गो बहार आई है लेकिन क्या ख़ुशी होगी हमें,
हर दिशा से है वतन मारा हुआ हालात का ।

आसमाँ को छू नहीं सकती कभी भी ये ज़मीं,
फिर भी दावा इल्मे .क़ुदरत का है क़ुछ हज़रात का ।

इक छलकते जाम जैसे आपके इस जिस्म ने,
और भी मौसम सुहाना कर दिया बरसात का ।

जिस तरह से आपने पूछा है मेरा हाले-दिल,
रुक नहीं सकता कभी भी आएगा सुख एक दिन,

रुक नहीं सकता कभी भी आएगा सुख एक दिन,
जैसे तय है दिन का आना और जाना रात का ।

बाल तक बाँका तेरा कोई भी कर सकता नहीं,
नाम ही तेरा 'विजय' जब है तो डर किस बात का ।

दूसरों की ख़ुशी से न जल जाइए,
उनकी ख़ुशियों में ख़ुद आप ढल जाइए ।

राह ख़तरों से खाली नहीं आपकी,
हर क़दम पे है दुश्मन सँभल जाइए ।

झोंपड़ी भी मयस्सर हुई ना हमें,
क्यूं कहा था बनेगा महल जाइए ।

आपके बाद भी याद करते रहें,
रुख ज़माने का यूँ भी बदल जाइए ।

यार चिकने हैं इतने की मत पूछिए,
आप इन पर न ऐसे फिसल जाइए ।

दूसरों को कुचलना मुनासिब नहीं,
भीड़ में पर न ख़ुद ही कुचल जाइए ।

ज़िन्दगी को बोझ की मानिंद अब ढोता नहीं,
जो भी हों हालात लेकिन कोई समझौता नहीं ।

बेवफ़ा मानो हमें पर पहले इतना सोच लो,
बेवफ़ा कोई सनम यूँ बेवजह होता नहीं ।

वक़्त ने भी साथ मेरे की नहीं थोड़ी वफ़ा,
आपको वरना कभी मैं इस तरह खोता नहीं ।

छवि तुम्हारी देखते ही देखते धुँधला न जाय,
बात इतनी-सी है दिल में इसलिए रोता नहीं ।

दाग़ दामन में लगे जो हैं निशानी प्यार की,
आपका तोहफा समझकर मैं उन्हें धोता नहीं ।

ख़ुश रहो तुम हो जहाँ बस यह दुआ अब रह गयी,
आपकी यादों में शब भर आजकल सोता नहीं ।

साज़ हैं बिखरे हुए वो छोड़कर जब से गए,
अब नहीं है वो ग़ज़ल भी और वे श्रोता नहीं ।

फूल हमने बिछाए हैं हर राह पर,
आएँ वो कौन-सी राह से क्या ख़बर ।

मुद्दतें हो गई उनको आए हुए,
बात क्या हो गई अब तो लगता है डर ।

जानता हूँ कि अब वो नहीं आएँगे,
राह पर फिर भी हर दम लगी है नज़र ।

साथ छूटा है जब से यहाँ भीड़ में,
ढूँढ़ता हूँ तभी से उसे दर-ब-दर ।

दोस्ती में कभी दुश्मनी में कभी,
इस जहाँ में मिला है सभी को ज़हर ।

आजकल लोकशाही का मतलब है ये,
लूट कर, ख़ून कर, ऐश कर, राज कर ।

इन अँधेरों के पीछे उजाले भी हैं,
तू न घबरा, चला चल, कि होगी सहर ।

ख़ूब देखा सुना पर नहीं मिल सका,
इस जहाँ में कहीं भी 'विजय'-सा जिगर ।

यूँ ही हमको सताया करो,
तुम न वादे निभाया करो ।

कनखियों से हमें देखकर,
तुम ज़रा मुस्कुराया करो ।

मैं मनाता रहूँ उम्र भर,
तुम यूँ ही रूठ जाया करो ।

पार हो जाए दिल के मेरे,
तीरे ऐसे चलाया करो ।

ज़िन्दगी का मज़ा आएगा,
गीत तुम मेरे गाया करो ।

तुम हमे ज़ख़्म देते रहो,
पर न मरहम लगाया करो ।

जाते-जाते भी मुड़कर ज़रा,
हमसे नज़रें मिलाया करो ।

तुम मेरी कब्र पर ऐ 'विजय'
सिर्फ काँटे चढ़ाया करो ।

मैं ज़ख़्म दिल का दिखाऊँ कैसे,
कहानी ग़म की सुनाऊँ कैसे ?

गले किसी को लगाऊँ कैसे,
क़सम तुम्हारी भुलाऊँ कैसे ?

रक़ीब के हो गए हो तुम तो,
सबक वफ़ा का सिखाऊँ कैसे ?

बनी हैं यादें ही ज़िन्दगी अब,
तो इनको दिल से मिटाऊँ कैसे ?

तुम्हारे कारण हुआ हूँ रुसवा,
नज़र किसी से मिलाऊँ कैसे ?

ख़ुदा नहीं तुम, तुम्हारे आगे,
ये सर मैं अपना झुकाऊँ कैसे ?

न तो दिवगंत हूँ औ' न बूढ़ा,
पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे ?

दुआ की हद से भी जो परे है,
'विजय' उसे मैं बुलाऊँ कैसे ?

❀

ये कैसा करिश्मा है हैरां है नज़र देखो,
बरसात के मौसम में जलता है शहर देखो ।

हर हाथ में ख़ंजर है सीनों में ज़हर देखो,
बहता है लहू हर सू अब चाहे जिधर देखो ।

दुनिया ने सताने में छोड़ी न कसर देखो,
मर जाऊँगा सोचा था, ज़िन्दा हूँ मगर देखो ।

बनता है महल जिसके हाथों से वही अक्सर,
आकाश तले जीवन करता है बसर देखो ।

सौ जुल्म किए मुझ पर, दीवाना कहा मुझको,
अफ़सोस ! सचाई की, कैसी है डगर देखो ।

इस दौर के मंज़र तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी फल खाए शजर देखो ।

पहले तो न ऐसा था अब जाने हुआ क्या है ?
मरते थे जो हम पर वो ढाते हैं क़हर देखो ।

वह डूब गया है तो इल्जाम न दो मुझको,
रोका था बहुत मैंने आगे है भँवर देखो ।

साँपों की न हो बातें विषधर न वही केवल,
इस दौर का इन्सां भी उगले है ज़हर देखो ।

मानवता, ईमान, भलाई के रस्ते पे चलते हैं,
राह में इनकी ग़म भी मिले तो हँस-हँस कर हम सहते हैं ।

रावण-राज हुआ जाता है राम-राज्य की कोशिश में,
चोर, लुटेरे, ख़ूनी, डाकू भी अब नेता बनते हैं ।

एक अजूबा और दोस्तों लोकतन्त्र में देखा है,
जो हैं आदमखोर उसे भी लोग आदमी कहते हैं ।

दुर्योधन-सा हठ है चारों ओर दु:शासन हैं फैले,
अन्धे जीजा को साले भी शकुनी-से ही मिलते हैं ।

देख तरक़्क़ी कितनी कर ली पाँच दशक में भारत ने,
सत्तर प्रतिशत लोग गरीबी में अब शान से रहते हैं ।

प्यास के मारे तड़प-तड़प कर प्राण गँवाये हैं जिसने,
घाट पे लाकर लोग उसी को क्यों नहलाया करते है ?

है मशहूर 'विजय' दुनिया में पर ये सोच के चिन्तित हूँ,
अच्छे शायर भरी जवानी में ही अक्सर मरते हैं ।

❀

हथेली गाल पे रखकर वो बैठना उनका,
नज़र झुका के अदा से वो देखना उनका ।

गुलाब शाख पे मदमस्त झूलता-सा लगे,
उछल के खेल वो रस्सी का खेलना उनका ।

यूँ बादलों में लगे चाँद झिलमिलाता-सा,
घड़ी-घड़ी में वो पर्दे से झाँकना उनका ।

बिठाये रखता है पहरों उन्हें करीब अपने,
मुझे रक़ीब-सा लगता है आइना उनका ।

कभी न देख सके फिर कहीं भी वो मंजर,
हमें है याद वो बारिश में भीगना उनका ।

फ़क़त ख़यालों में होती है बात उनसे 'विजय'
नसीब ऐसा कहाँ ? हो जो सामना उनका ।

कहाँ को चले थे कहाँ आ गये हैं,
नहीं है ये मंज़िल जहाँ हम खड़े हैं ।

ग़लत आप हैं क्यों उसे कोसते हैं,
उठाये नज़र थे तभी गिर पड़े हैं ।

भले क़त्ल कर दो करेंगे न उफ़ हम,
सदा ख़ुश रहो तुम यही चाहते हैं ।

जिसे अपना रक्षक बनाया था हमने,
वही आज भक्षक हमारे बने हैं ।

यहाँ योग्यता को मिले काम कैसे,
ख़ुशामद, सिफ़ारिश के रोड़े बड़े हैं ।

वो बेआबरू तो हुए हैं हमेशा,
नहीं मानते पर बड़े मनचले हैं ।

करें छल, कपट जो सुखी हैं जहाँ में,
मगर दुर्दशा भी वही भोगते हैं ।

ज़माने में मशहूर होना है उनको,
तभी तो 'विजय' की ग़ज़ल गा रहे हैं ।

शिखण्डी सरीखे चले युद्ध करने,
'विजय' का ही वरदान वो चाहते हैं ।

इस कदर बेज़ार हूँ कि कुछ समझ आता नहीं,
इस जहाँ में कोई भी अब दिल को बहलाता नहीं ।

रास्ता मुश्किल मिला तो चल दिये वो छोड़कर,
इस तरह जैसे कि हमसे अब कोई नाता नहीं ।

हो गई दिल की ज़मीं भी लाल देखो दोस्तो,
दुश्मनों पर भी कोई ऐसा क़हर ढाता नहीं ।

हादसे इतने हुए हैं साथ मेरे क्या कहूँ,
मौत भी हो सामने तो अब मैं घबराता नहीं ।

दे रहे वे बद्‌दुवा थी जिनसे उम्मीदे दुवा,
नोचते हैं घाव लेकिन कोई सहलाता नहीं ।

प्यार की एक चाह ने इतना सताया है 'विजय',
दिल-पपीहा भी पियू के स्वर में कुछ गाता नहीं ।

गिला करता हूँ दामन सब्र का जब छूट जाता है,
मगर लब मेरे खुलते ही वो मुझसे रूठ जाता है ।

ये धागा प्रेम का जुड़ जाए इस कोशिश में हूँ लेकिन,
यहाँ से जोड़ता हूँ तो वहाँ से टूट जाता है ।

जिसे अपना समझता हूँ, जिसे सम्मान देता हूँ,
वही तो ख़ून के मुझको पिलाता घूँट जाता है ।

कहाँ जाऊँ, कहूँ किससे, किसे हमराज़ मैं समझूँ,
जिसे अपना समझता हूँ वही तो लूट जाता है ।

हँसी के बाँध से सैलाबे ग़म को रोकता तो हूँ,
मगर तनहाई में ये बाँध अक्सर टूट जाता है ।

ज़माने का हर जुल्म हँस के सहा है,
न शिक्वा किसी से न कोई गिला है ।

सभी कह रहे हैं ज़माना बुरा है,
मगर कोई खुद में नहीं झाँकता है ।

न जाने मेरे दिल को क्या हो गया है,
अकेले में रोना बहुत चाहता है ।

बड़े शौक़ से करलो तर्के - तअल्लुक,
मगर ये बता दो हुई क्या ख़ता है ?

तेरी वापसी की उमीदें सजाए,
दिल अब भी तेरा रास्ता देखता है ।

बहुत दूर तक यूँ तो तनहाइयाँ हैं,
मगर पास तू है ये क्यों लग रहा है ।

वफ़ा चीज़ क्या है नहीं जानता जो,
वही कह रहा है 'विजय' बेवफ़ा है ।

नाज़ुक हैं तेरे पाँव तो चलना कभी नहीं,
रस्ता ये प्यार का है कोई दिल्लगी नहीं ।

है आरज़ू यही कि तू इक बार फिर मिले,
ऐ हुस्ने-लाजवाब ! तबीयत भरी नहीं ।

रहने लगे हैं यार फ़क़त इसलिए ख़फ़ा,
उनके ग़लत कथन को कहा क्यों सही नहीं ?

जो थे ख़िलाफ़-मय के वही कह रहे हैं अब,
जीवन तेरा फ़िज़ूल है गर तू ने पी नहीं ।

हर मोड़ पर ही ठेकरें खाई हैं आपने,
फिर भी जनाब आँख अभी तक खुली नहीं ।

छल-घात कर सके न कभी इसलिए ही तो,
दौलत हमारे पास तक आई कभी नहीं ।

माना कि है ये दौर ख़ुशामद का ही मगर,
हमसे कभी किसी की ख़ुशामद हुई नहीं ।

वो लाख दें सुबूत वफ़ा का मगर 'विजय'
चेहरा बता रहा है कि नीयत सही नहीं ।

※

क्रान्ति करती भूख यारो अब बहल सकती नहीं,
कुछ भी कर लो रेत में तो नाव चल सकती नहीं ।

हादसे कितने ही जाने रोज़ सहती है धरा,
आसमाँ के गड़गड़ाने से दहल सकती नहीं ।

मीर ज़ाफ़र और जयचन्दों को हम पहचान लें,
तो कोई ताकत हमारा सर कुचल सकती नहीं ।

आरज़ू सोने-सी चमकेगी ग़मों की आँच से,
मोम जैसे ये कभी यारो पिघल सकती नहीं ।

स्वार्थ, लालच की लगा मत बेल तू पछताएगा,
ये हमेशा के लिए तो फूल फल सकती नहीं ।

सच बहुत कड़वा है माना पर भला इसमें ही है,
जान लेगा सत्य यह तो बात खल सकती नहीं ।

ठान ले तो काल को भी तू हरा देगा 'विजय'
जान तेरी बिन तेरी इच्छा निकल सकती नहीं ।

क्या बताएँ कैसे-कैसे हादसे सहते रहे,
सच कहें तो ज़िन्दगी भर किश्तों में मरते रहे ।

गैर से शिक़वा नहीं जब ज़ख़्म अपनों से मिला,
अजनबी-से अपने घर में हम सदा रहते रहे ।

वो नज़र के सामने कलियाँ मसलता ही रहा,
फिर भी अनदेखा उसे क्यूँ उम्र भर करते रहे ।

सादगी के बदले हमको क्या मिला कैसे कहें ?
दोस्तों के हाथ ही हम आए दिन लुटते रहे ।

भूख से सब गौएँ बेचारी तड़प कर मर गईं,
घास सारी लोकशाही में गधे चरते रहे ।

नाम अपना जुड़ गया जब भी 'विजय' के नाम से,
तो हमारे नाम से अक्सर सभी जलते रहे ।

तेरी यादों ने कभी चैन से रहने न दिया,
काश तू आए इसी चाह ने मरने न दिया।

घाव सीने में लिए आह दबाए लब में,
आँख से तुझको मगर अश्क-सा गिरने न दिया।

कल कड़ी धूप में चलते हुए यादों ने तेरी,
पाँव औ'जिस्म को इक पल को भी जलने न दिया।

वक़्त बेवक़्त मुझे आ के वो मिलता ही रहा,
यूँ किसी ज़ख़्म को उसने कभी भरने न दिया।

ग़म उठाये हैं बहुत और सहे हैं धोखे,
रंग इन्सान का पर दिल से उतरने न दिया।

तेज आँधी चली, तूफ़ान उठे हैं फिर भी,
दीप हिम्मत का है रौशन कभी बुझने न दिया।

इस ज़माने से नहीं कोई भी शिकवा हमको,
रंज ये भी नहीं तकदीर ने हँसने न दिया।

बाग़बाँ ने ही किया काम जो सैयाद का था,
जिस पे उम्मीद थी उस फूल को खिलने न दिया।

आज कट जाय अगर सर तो कोई बात नहीं,
यूँ हमेशा ही रहा शान से झुकने न दिया।

दिल पे ईमान पे सौ वार ज़माने ने किये,
ऐ 'विजय' ख़ुद को मगर हमने बिखरने न दिया।

बताएँ क्या ग़रीबी में यूँ गीला हो गया आटा,
किये हैं गाल अपने लाल ख़ुद ही मारकर चाँटा ।

तेरी नज़रों में उल्फ़त एक सौदा है तो सुन हमदम,
सभी नुकसान हम लेंगे तुझे होगा नहीं घाटा ।

बड़े अपनत्व से हँसकर गले जिसको लगाया था,
उसी ने साँप बनकर आज मेरे मर्म पर काटा ।

जहाँ के सामने देते रहे तुम गालियाँ जिसको,
बड़ा सम्मान पाने को उसी का थूक क्यों चाटा ?

अगर ख़ामोश हूँ मैं तो 'विजय' इतना समझ ले तू,
किसी तूफ़ान के आने से पहले का है सन्नाटा ।

हरिक शै की तह में नज़र जा रही है,
मेरी सोच आखिर किधर जा रही है ।

हमीं ने दिया ताज उनको मगर अब,
कृपा दृष्टि उनकी उधर जा रही है ।

सवेरे किरण आई थी जो चमकती,
अटी धूल से अब वो घर जा रही है ।

यहाँ जो बहार आई थी खिलखिलाती,
लिए चश्मे-तर लौट कर जा रही है ।

पतन की भयानक है खाई जहाँ पर,
डगर ये उसी मोड़ पर जा रही है ।

अगर वो सवारी है माँ शारदे की,
तो निश्चित 'विजय' के ही घर जा रही है ।

बरसात के मौसम में बस एक ही ख़्वाहिश है,
नज़रों से पिला दीजे इतनी-सी गुज़ारिश है।

घनघोर घटा छाई पुरजोश में बारिश है,
पानी ये तेरे बिन तो लगता है कि आतिश है।

मावस के अँधेरे में पूनम-सा उजाला ये,
कुछ और नहीं तेरे रुख़सार की ताबिश है।

शरमा के ज़रा हँस दो नज़रों को चुराकर के,
इक बार इधर देखो इतनी फरमाइश है।

मिलते ही शनम से क्यों सब भूल गये कहना,
माथे पे पसीना है होठों पे भी लरजिश है।

हम से ही मुहब्बत है हालात बताते हैं,
वो लाख छुपायें पर बेकार की कोशिश है।

ठुकरा भी दे ये दुनिया, आजा कि गले लग जा,
वरना है दिखावा सब ये प्यार नुमाइश है।

बरबाद हुए हम तो गमगीन हुए हैं वो,
लगता है पसीजे हैं किसकी ये सिफारिश है।

दुनिया-ए-मुहब्बत में शोहरत ये 'विजय' मेरी,
तेरी ही इनायत है, तेरी ही नवाजिश है।

नहीं है गाँव तेरा नये युग का शहर है,
चला जा लौट जा तू यहाँ तो बस ज़हर है ।

यहाँ हाथों में काँटे, निगाहों में ज़हर है,
दिमागों में है वहशत दिलों में भी शरर है ।

कभी चलते हैं ख़ंजर, कभी उड़ते हैं पत्थर,
लहू नाली में बहता, बड़ा सुन्दर नगर है ।

ख़ुशामद काम जिसका हँसे हर बात पर जो,
भरोसे का नहीं वो तुझे इसकी ख़बर है ।

सभी कुछ लूट कर जो डुबो दे दलदलों में,
उसी का नाम अब तो यहाँ पर राहबर है ।

यहाँ पुजती सफलता मिले जिस राह से भी,
सफल वो है कि जिसकी बड़ी .कातिल नज़र है ।

कभी सच बोलना मत, भलाई भी न करना,
कहा हर एक ने ही ये काँटो की डगर है ।

भुला पायेगा तुझको ये मुमकिन ही नहीं है,
ज़रा भी तू किसी के ख़यालों में अगर है ।

समय बलवान है पर मिटा पाया न अब तक,
ये ज़ज्बा प्यार का है सनातन है अमर है ।

विधाता के नियम को पलट दे एक पल में,
सुना है दिल से निकली दुआओं में असर है ।

खड़ी है हर दिशा में दरिंदों की ही सेना,
अकेला है निहत्था 'विजय' फिर भी निडर है ।

थिरक-थिरक लहर-लहर रिमझिम बरसात है,
प्रियतम से मेरी फिर आज मुलाकात है ।

यादों के बादल घिर आए हैं देखिए,
शीतल पुरवैया से पुलकित ये गात है ।

कूक रही कोयल भी ऐसे अमराई में,
लगता है बगिया में कोई नई बात है ।

फूलों सा चेहरा औ' खुश्बू से तर बदन,
क़ुदरत की तुझको ये अनुपम सौगात है ।

जानो क्या तुम इसमें कितना आराम है,
मदमाते कजरारे नैनों की घात है ।

घूँघट पट हटते ही जगमग यूँ हो गई,
मावस में लगता है पूनम की रात है ।

हो सके तो कभी याद करना हमें,
ज़िन्दगी के सफ़र में मिले थे कभी,
ख़ुशनुमा वादियों में टहलते हुए,
हाथ में हाथ लेकर हँसे थे कभी ।

इस ख़िज़ाँ से चमन में उदासी नहीं,
ये तक़ाजा है मौसम का होना ही था,
है अभी तक महक मेरी साँसों में वो,
फूल जो इस चमन में खिले थे कभी ।

कुछ कमी थी वफ़ा में सनम आपकी,
प्यार में कुछ असर कम हमारे भी था,
हीर, लैला दुबारा न लेंगी जनम,
इश्क में रांझा, मजनू हुए थे कभी ।

नक्श पैबस्त हैं इस क़दर आपके,
झील में झिलमिलाते सितारे दिखें,
खिलखिलाकर कभी छिप गये फूल में,
शम्स में सरसराने लगे थे कभी ।

ये यक़ीं है मुझे लौट आएँगे वो,
जान अब तक टिकी है इसी आस में,
कान में गूँजती है क़सम आपकी,
साथ रहने के वादे किये थे कभी ।

कोई नहीं है जिसको अपने दिल की हालत बतलाऊँ,
ख़ुने जिगर से लिख तो लिया पर ख़त ये किसको पहुँचाऊँ ?

आग लगी है हर इक घर में दर्द भरा है हर दिल में,
कैसे फिर मैं गीत ख़ुशी के महफ़िल में हँसकर गाऊँ ?

आज बड़ा मायूस हुआ हूँ जब अपने भीतर झाँका,
शहरों का विष लेकर कैसे गाँव में अब वापस जाऊँ ?

अपने-अपने वक़्त पे सबको जाना पड़ता है आखिर,
दूध पिलाकर पाला जिसने कैसे उसको समझाऊँ ?

लाठी जिसकी भैंस उसी की इस युग का दस्तूर है ये,
जंगल राज बढ़ा है चारों ओर तो क्या अब सिखलाऊँ ?

मिल ना पाया आज 'विजय' के पास भी इस जीवन का हल,
पत्थर दिल दुनिया में अपने दिल को कैसे बहलाऊँ ?

आपके सामने हादसा हो गया,
फिर भी कहते हो क्या माजरा हो गया ?

मेरे दिल को न जाने ये क्या हो गया,
जिक्रे-दिलबर भी अब बेमज़ा हो गया ।

है नशीली बहुत आपकी कल्पना,
बिन पिए ही मुझे तो नशा हो गया ।

इक ज़माना मनाने में जिसको लगा,
आज मुझसे वही फिर ख़फ़ा हो गया ।

अजनबी की तरह अब वो मिलने लगे,
किस क़दर दरमियाँ फ़ासला हो गया ।

रहबरों के रुख़ों से नक़ाबें उठीं,
रहज़नो से मेरा सामना हो गया ।

दर्द सहते हुए आह भरते हुए,
सारा जीवन हमारा फ़ना हो गया ।

इन हसीं वादियों से चलो दूर अब,
ज़ख़्म दिल का यहाँ तो हरा हो गया ।

तेरा ग़म भी गया बीच में छोड़कर,
ज़िन्दगी का सफ़र बेमज़ा हो गया ।

ए कज़ा तू गले से लगा ले मुझे,
दर्द अब तो बहुत ही घना हो गया ।

ऐ 'विजय' जब से तेरा सहारा मिला,
तब से जीने का फिर हौसला हो गया ।

❀

रही जिसकी चाहत मुझे उम्र भर,
मुझे मिल न पाई कभी वो नज़र ।

सनम आपका है ये कैसा शहर,
गुलाबों के अन्दर भरा है ज़हर ।

ख़ुदा से भी लड़कर चला आऊँगा,
अगर तेरी आहों में होगा असर ।

है रुस्वाई, तनहाई ग़म से भरा,
मुहब्बत का आसाँ नहीं है सफ़र ।

अगर दिन में मिल जाता है वो हसीं,
नहीं नींद आती मुझे रात भर ।

भुला कर 'विजय' दुश्मनी तुम मिलो,
सभी से गले प्यार से दौड़कर ।

चलेंगे हमेशा वफ़ा की डगर वो,
कहानी को अपनी करेंगे अमर वो ।

करें याद फिर ना वफ़ा को दुबारा,
सनम तू ने ढाया है मुझ पे क़हर वो ।

अँधेरे को दिल के करे कोई रौशन,
बहुत ढूँढ़ा, लेकिन नहीं है नज़र वो ।

सजा दूँ ज़मीं पे सितारों की महफ़िल,
करूँगा मैं ये भी कहें तो मगर वो ।

ग़मों को भुला दे नई ज़िन्दगी दे,
कहीं प्यार में अब नहीं है असर वो ।

लगाया कलेजे से पढ़कर के ख़त को,
इसी से ही बूझो क्या होगी ख़बर वो ।

निभाई किसी ने वफ़ा यूँ 'विजय' से,
जनाज़े में शामिल है देकर ज़हर वो ।

हादसा बीत गया याद दुबारा न करो,
याद आ जाए तो तुम अश्क बहाया न करो ।

अपने रुख़्सार से तुम ज़ुल्फ़ हटाया न करो,
और शरमा के यूँ चेहरे को छिपाया न करो ।

हाथ सीनो पे है औ' आह सभी के लब पर,
इस तरह तीर निगाहों के चलाया न करो ।

चाँद पूनम का अमावस में नज़र आता है,
रात के वक़्त कभी छत पे तुम आया न करो ।

इस ज़माने में हमीं पी के सँभल सकते हैं,
हर किसी को यूँ निगाहों से पिलाया न करो ।

सारी दुनिया को ख़बर होने लगी है देखो,
राज़ की बात सहेली को बताया न करो ।

अश्क बहने लगें औ' होठों पे आ जाए आह,
इस क़दर आप कभी हमको हँसाया न करो ।

और मुश्किल खड़ी कर देंगे, ज़माने वाले,
प्यार इतना भी 'विजय' हमसे जताया न करो ।

❀

ख़फ़ा मैं नहीं हूँ किसी बात से,
वो खेलें भले मेरे जज़बात से ।

ख़ुदा मानकर ज़िन्दगी जिसको दी,
बुरा हूँ मैं उसके ख़यालात से ।

उसे अपनी जानेजाँ जब से बनाया,
जला तब से दिल चाँदनी रात से ।

अगन उसने दिल में लगाई है यूँ,
बुझेगी नहीं ये तो बरसात से ।

निहत्थे ही बदलूँगा तक़दीर अब,
लडूँगा मैं मौजुदा हालात से ।

सहारे नहीं औ' कठिन राह है,
रुकूँगा नहीं अब मैं हिमपात से ।

कहो देश में वह रहेगी कहाँ ?
गई शांति गाँधी के गुजरात से ।

कहें प्यार से तो तुम्हें जाँ भी दें,
न देंगे कभी कुछ बलाघात से ।

लाखों दरिया पी के उसकी तिश्नगी बुझती नहीं ।
प्यारा सागर की तुम्हें मेरी तरह लगती नहीं ?

क्या हुआ 'गर साथ अपनों ने तेरा छोड़ा है दोस्त,
तीरगी में साथ परछाई भी तो रहती नहीं ।

चाँद, तारे, सूर्य में है ओ' कभी जुगनू में है,
तीरगी की कोशिशों से रोशनी मिटती नहीं ।

पड़ गई आदत गुलामी की इसे तो इस क़दर,
कर दिया है मुक्त चिड़िया को, मगर उड़ती नहीं ।

वो यक़ीनन एक दिन होता है यारो कामयाब,
आत्मबल डिगता न जिसका, आस भी मरती नहीं ।

लौटकर तुम पास मेरे फिर से आओगे 'विजय',
बिन किनारों के कभी कोई नदी बहती नहीं ।

❀

हर वक़्त देखिए तो उफनते हुए सवाल,
चारों तरफ हैं अब तो सुलगते हुए सवाल ।

जब जब ख़याल आया चलो देश से मिलूँ,
तब तब मुझे मिले हैं दहकते हुए सवाल ।

है शक्ति बेशुमार यार इनको सँभालो,
यौवन के आजकल हैं उजड़ते हुए सवाल ।

नारी विकास पर है जिरह पाँच दशक से,
कोठों पे क्यूँ हैं आज खनके हुए सवाल ।

मतलब औ' स्वार्थ से भरे हुए जहान में,
देखे सभी दिलों के बिगड़ते हुए सवाल ।

ज्वाला दिलों में हाथ में लिये हुए मशाल,
कर देंगे भस्म आग उगलते हुए सवाल ।

वो हिन्दू, मुसलमान वो ईसाई वो सरदार,
हर सिम्त धर्म के हैं उलझते हुए सवाल ।

था एक किन्तु टूट के हज्जार हो गया,
शीशे की तरह आज बिखरते हुए सवाल ।

छँट जाएँगी घटाएँ औ' चमकेगा सूर्य भी,
जिस दिन दिखाई देंगे सुलझते हुए सवाल ।

❀

तलाश की गई यारो तो उजड़ा दिल निकला,
वफ़ा के नाम का टूटा हुआ महल निकला।

तमाम उम्र जिसे नाख़ुदा समझते रहे,
हमारी नाव डुबाने में वो सफल निकला।

दिखाई दे रहा था दूर से गुलिस्ताँ मगर,
उसे क़रीब से देखा तो वो जंगल निकला।

हमारी मौत ने ये राज़ एक खोल दिया,
वफ़ा के प्याले में भी दोस्तो गरल निकला।

शजर लगाए थे हमने तो प्यार के लेकिन,
कभी ख़ुशी का न उसमें से एक फल निकला।

गुलाबी गाल औ' अधरों पे है लहू मेरा,
सरे बाज़ार मेरा देखिए क़ातिल निकला।

लगे न दाग़ उन्हें इसलिए न आए इधर,
मगर ये सच है कि कीचड़ से भी कमल निकला।

हरेक शख़्स शहर में 'विजय' तुम्हारी ही,
वफ़ा औ' इश्क की गाता हुआ ग़ज़ल निकला।

दिलों में दर्द होगा तो जवाँ होगी मुहब्बत फिर,
अगर बुनियाद बाकी है खड़ी होगी इमारत फिर ।

चमन ये मुस्कुराएगा अगर उम्मीद है बाकी,
जो रूठी है अभी हमसे मेहरबाँ होगी क़ुदरत फिर ।

लगी है ईंट ही सबमें शिवाला हो या मस्जिद हो,
रगों मे दौड़ता है तो लहू में होगी चाहत फिर ।

बुलंदी पर तू पहुँचेगा मिलेगी आख़िरी मंज़िल,
झटक कर फेंक दे ऐ दोस्त पस्ती औ' हरारत फिर ।

नहीं उसका भरोसा वो हर इक पल रुख बदलता है,
जताकर प्यार ऊपर से करेगा वो शरारत फिर ।

हमारे चाहने वाले जहाँ में कम नहीं हैं,
किसी को भी मगर दिल दे दें ऐसे हम नहीं हैं ।

तुझे समझा रहा हूँ क्योंकि मैं सच जानता हूँ,
पनारे हैं शहर के ये कोई जम जम नहीं हैं ।

हमारी कामयाबी का महज़ है राज़ इतना,
जहाँ में तो हमारे आजतक हमदम नहीं हैं ।

हमारी सादगी को देखके तुम ये न समझो,
हमारे बाजुओं में अब कोई दमखम नहीं हैं ।

सुनहरी इस धरा को लाल कर डाला है ख़ूँ से,
मगर कहते हैं सीना तान हम निर्मम नहीं हैं ।

अगर फ़ौलाद है तू तो हमें शोला समझ ले,
जलाके राख कर देगें कोई शबनम नहीं हैं ।

बनालो खुद को सूरज तुम तभी यह कह सकोगे,
जहाँ हम है वहाँ निश्चित समझ लो तम नहीं हैं ।

कहीं मासूमियत दिल में नहीं पाओगे अब तुम,
मनुज अब हैं नये इस दौर के आदम नहीं हैं ।

हरा सकते हैं हमको ग़म कभी धोखे से लेकिन,
निराश हो जाएँ हम ऐसे जहाँ में ग़म नहीं हैं ।

ज़माने से मिले जो ज़ख़्म वो अब तक हरे हैं,
मगर आँखें 'विजय' की आज भी पुरनम नहीं हैं ।

अगर बुरा न लगे तो हम एक बात कहें,
किसी भी शख़्स पे हरगिज न ऐतिबार करें।

यही तो देन है जम्हूरियत की ऐ लोगों !
अमीर ऐश करें औ' गरीब दुख में रहें।

निशान ही न रहे तीरगी का दुनिया में,
जला के दीप ज़माने को रोशनी से भरें।

मिसाल बन के जियो दोस्तों ज़माने में,
फ़ना के बाद भी दुनिया के लोग याद करें।

जहाँ भी आपकी ख़ातिर लहू बहाएगा,
अगर जहाँ के लिए आप मुश्किलात सहें।

यही दुआ मैं सदा माँगता रहा हूँ 'विजय'
ख़ुदा करे मेरे दुश्मन भी ख़ूब फूलें फलें।

नमक, मिर्च, आटा, लकड़ी,
ये जाला है नर मक़ड़ी ।

कठपुतली से नाच रहे,
डोरी तो उसने पकड़ी ।

खोज रहा मानव अब तक,
जग की सबसे प्रथम कड़ी ।

जनम-मरण औ' रात-दिवस,
क़ुदरत की अनमोल घड़ी ।

झूला हो या हो अरथी,
ख़ूब सुलाती है लकड़ी ।

उन्हें शर्म क्यों आएगी,
मोटी है जिनकी चमड़ी ।

वक़्त तमाचा मारेगा,
तब निकलेगी सब अकड़ी ।

हँसिया से कट जाते हैं,
गन्ना हो या हो ककड़ी ।

मानवता समझाई बहुत,
पर उसके पल्ले न पड़ी ।

मेहनत छोड़ ख़ुशामद कर,
बनती है किस्मत बिगड़ी ।

तब से चैन सुकून नहीं,
जब से तुझ संग आँख लड़ी ।

जीवन सूना-सूना है,
प्रीत मेरी जब से बिछड़ी ।

अटल सत्य है जीवन भर,
साथ निभाती है लकड़ी ।

बाढ़ यक़ीनन आएगी,
तेज बहुत बरसात पड़ी ।

अपनी-अपनी किस्मत है,
लीद मिले या फिर रबड़ी ।

ऐंठ 'विजय' तू खूब इसे,
मुर्गी है मोटी तगड़ी ।

ये कैसा क़रिश्मा है चाहूँ भूलना मगर याद करता चला जा रहा हूँ,
तुझे छोड़ जाने की कोशिश में हर पल तेरी ओर बढ़ता चला जा रहा हूँ।

सही प्यार वो है समर्पण हो जिसमें यही चाहता हूँ रहे ख़ुश हमेशा,
यही सोचकर के ज़फ़ाएँ भी उनकी मैं हँस-हँस के सहता चला जा रहा हूँ ।

वो हाथों की मेंहदी, वो माथे की बिंदिया, वो गालो की रंगत, लबों पे तबस्सुम,
ख़यालो में तसवीर जाने जिगर की कभी से बनाता चला जा रहा हूँ ।

लगा इक ज़माना मनाने में जिसको वही आज फिर से ख़फ़ा हो गया है,
तुम्हें हाले दिल क्या बताऊँ मैं अपना कि घुट-घुट के मरता चला जा रहा हूँ।

ये आँसू छलक कर तेरी बेवफ़ाई के किस्से जहाँ से न कह दें कभी भी,
यही सोचकर अब ख़ुशी के ही नग्मे यूँ ही गुनगुनाता चला जा रहा हूँ ।

पिला ही दिया आज साक़ी ने इतना ख़राबात में कुछ बचा भी नहीं है,
मगर बेख़ुदी में भी जाने तमन्ना ख़ुदी से ही लड़ता चला जा रहा हूँ ।

दिये ज़ख़्म अपनों ने गैरों ने ठोकर उठाए हैं दुख चाह में हर ख़ुशी के,
सभी दर्द अपने छिपाकर के फिर भी 'विजय' देखो हँसता चला जा रहा हूँ।

यहाँ हर आदमी में इक नया मंज़र नज़र आया,
कहीं पत्थर, कहीं चाकू, कहीं ख़ंजर नज़र आया।

यहाँ पर बोलती हैं तोप औ' बंदूक ही केवल,
अगल बोला बशर तो धूल में हंजर नज़र आया।

बुझाने प्यास मन की हम यहाँ आए मगर यारो,
जिसे दरिया समझते थे वही बंजर नज़र आया।

जिसे लटकाया जाना चाहिए फाँसी के फन्दे से,
सुशोभित फूल माला से वही हंजर नज़र आया।

नये संगीत में मेढ़क गले को फाड़कर चीखा,
बिना सुरताल के फिर कूदता जंजर नज़र आया।

सदी पहले बनी थी योजना की स्वर्ण युग लाएँ,
मगर कागज़ पे उसका आज तक पंजर नज़र आया।

'विजय' जन्नत के ख्वाबों में रहा मशगूल अब तक मैं,
मगर बरअक्स इसके हर तरफ मंज़र नज़र आया।

बारहा मैं आदमी के ख़ून को क्यों जाँचता हूँ,
जानता हूँ सत्य फिर क्यों आदमी को चाहता हूँ।

इस जहाँ से तीरगी को ही मिटाना चाहता हूँ,
इसलिए वरदान इच्छामृत्यु का ही माँगता हूँ।

सोचना है उनको समझाने का कोई दूसरा ढंग,
वो नहीं समझेंगे भाषा प्यार की यह जानता हूँ।

कर भला होगा बुरा अब ये ज़माना आ गया है,
इसलिए अब फूल रखकर ख़ार ही बस बाँटता हूँ।

मौत पर मेरी दहाड़ें मारकर जो रो रहा है,
हाल उसके दिल का लेकिन मैं बख़ूबी जानता हूँ।

काफ़िलों को मैंने पहुँचाया है उनकी मंजिलों तक,
कौन फिर भी याद करता है मुझे मैं रास्ता हूँ।

तू बहुत नादान है तू बन नहीं पाएगा कुछ भी,
देख मुझको मैं ख़ुशामद का हुनर भी जानता हूँ।

कैक्टस घर में लगाना है नई तहजीब अब तो,
इसलिए वट वृक्ष आँगन का पुराना काटता हूँ।

खा सके चारा, क़फ़न बेचे औ' घोटाले करे जो,
मैं उसे अपने वतन का असली नेता मानता हूँ।

क़ाबिले तारीफ़ है साहस 'विजय' का इस जहाँ में,
ठान ले तो विश्व में मुमकिन है सब स्वीकारता हूँ।

कल तक जो अपने थे अब वो बेगाने-से रहते हैं,
मिल जाते है भीड़ में फिर भी अनजाने-से रहते हैं ।

पहले तो सीने से अपने हमको लगाये रहते थे,
दूर वो शायद अब दुनिया के बहकाने से रहते हैं ।

हम भी सबब कल पूछेंगे क्यों तर्केतअल्लुक कर बैठे,
आज भरी महफ़िल में लेकिन समझाने से रहते हैं ।

शायद हमको याद करो तुम प्यार का जब इतिहास लिखो,
इश्क में जान लुटाने वाले अफ़साने-से रहते हैं ।

अब तक तो आए ही नहीं हैं और न शायद आएँ वो,
वक्त़ है आख़िर याद में फिर भी दीवाने-से रहते हैं ।

मर-मर के सौ बार जिया हूँ, जी के फिर सौ बार मरा,
तेरे प्यार की शम्मा पर हम परवाने-से रहते हैं ।

सुन्दर महल हुआ करता था सपनों का अब खँडहर है,
दिल की बस्ती पर अब छाये वीराने-से रहते हैं ।

जाकर उनके पास 'विजय' हम भूल गए हैं ग़म अपने,
उनके नैन भरे हैं मय से पैमाने-से रहते हैं ।

मुझे तो चाहिए यह आसमाँ पूरा का पूरा ही,
नहीं लिख पाऊँगा मैं नाम 'गर थोड़ी जगह होगी ।

अधूरी है तेरे बिन ये अधूरी ही रहेगी अब,
कहानी ख़त्म कैसे हो वो जो तूने शुरू की थी ।

बहारों से नहीं शिक़वा न बुलबुल से शिक़ायत है,
किसी भी बाग़वाँ ने गुल खिलाया ही नहीं कोई ।

तेरा हौले से मुसकाना फिर आँखों को चुरा लेना,
निराली वो अदा तेरी ख़यालों से नहीं जाती ।

बिना माँगे मुरादें मेरी 'गर तू पूरी कर दे तो,
ख़ुदा मानूँ तभी तुझको तभी समझूँ ख़ुदाई भी ।

ज़माने का मिले सहयोग 'गर तो ठीक वरना मैं,
अकेले ही सजाऊँगा हसीं महफिल सितारों की ।

भले ही ख़ार या रोड़े बिछाएँ आप राहों में,
मगर रँग लाएगी इक दिन कड़ी मेहनत हमारी भी ।

'विजय' तुझसे भी क़ाबिल हैं ग़ज़लगो और भी लेकिन,
जो देखी बात तुझमें वह नहीं देखी किसी में भी ।

हर तरफ अचरज के ही बस सिलसिले हैं,
पर्वतों पर भी मुझे दलदल मिले हैं ।

हर दिशा में है मुखर शैतान ही अब,
होठ तो बस आदमी के ही सिले हैं ।

मज़हबी राहों को ख़ूं से लाल करते
कौम के भटके हुए सब काफ़िले हैं ।

लो सदी इक्कसवीं भी आ गई है,
कैक्टस में फूल चम्पा के खिले हैं ।

जानता हूँ मैं तुम्हारी भी दिलेरी,
नाक औ' घुटने गुलामी में छिले हैं ।

झोंपड़ी तो सत्य की जलती रही है,
सिर उठाए छल-कपट के ही किले हैं ।

त्याग कर तृष्णा 'विजय' ने पा लिया सब,
अब ज़मानें से नहीं शिक़वे-गिले हैं ।

हरिक राह में सिर्फ काँटे बिछे हैं, मगर फिर भी बढ़ता चला जा रहा है,
वो मंजिल का सपना नज़र में सजाए, हरिक गम को सहता चला जा रहा है।

जले चाहे कश्मीर, आसाम, पंजाब चाहे कहीं ख़ून या रहजनी हो,
मेरे देश का राहबर मस्त होकर यूँ ही गुनगुनाता चला जा रहा है।

ये चम्पा है मेरी, चमेली तुम्हारी, वो कचनार उसका ये गैंदा है इसका,
इसे रातरानी, उसे गुलमुहर दो, चमन देखो बँटता चला जा रहा है।

कहीं प्रान्त-भाषा, कहीं धर्म-जाती, कहीं राजनीति, कहीं स्वार्थ कारण,
हुआ जब से आजाद भारत तभी से लगातार जलता चला जा रहा है।

ज़माने में सच बोलने का सिला जो मिला है सभी को पता है मुझे वो,
मगर मेरा दिल कुछ समझता नहीं और रहे-हक़ पे बढ़ता चला जा रहा है।

अगर आशियाना बचाना है अपना, तो लाजिम है पहले चमन को बचाएँ,
मुनासिब नहीं देर करना 'विजय' अब हरिक पेड़ गिरता चला जा रहा है।

• • •